अध्याय-26

प्रक्रिया के सामान्य नियम

सूचनाएं

सामान्य प्रक्रिया

सदस्य द्वारा सभा में उठाये जाने वाले प्रत्येक मामले में, चाहे वह प्रश्न, संकल्प, प्रस्ताव, विधेयक, संशोधन या अन्यथा किसी रूप में हो, सूचना देने की आवश्यकता होती है। नियमों द्वारा अपेक्षित प्रत्येक सूचना को लिखित में देना होता है जिसे महासचिव को संबोधित करना होता है और सूचना देने वाले सदस्य को इस पर हस्ताक्षर करने होते हैं और शनिवार, रविवार या सार्वजनिक अवकाश के अतिरिक्त प्रत्येक दिन[1] म॰ पू॰ 10 बजे से म॰ पू॰ 4 बजे[2] के बीच इसे सूचना कार्यालय में देना होता है । म॰ पू॰ 4 बजे के बाद छोड़ी गई या प्राप्त की गयी सूचनाएं या जब सूचना कार्यालय बंद हो तो छोड़ी गई सूचनाएं अगले दिन के कार्य-दिवस में दी गयी मानी जाती हैं।[3]

सदस्य व्यक्तिगत रूप से या अपने संदेशवाहकों द्वारा या डाक द्वारा अपनी सूचनाएं भेज सकते हैं।

> नियम समिति का यह विचार था कि फैक्स के माध्यम से प्राप्त की गयी सूचनाओं/पत्रों को प्रामाणिक समझा जाना चाहिए बशर्ते कि वे हस्ताक्षरित हों और बाद में उनकी लिखित सूचनाएं प्राप्त हो जाएं।[4] तथापि, प्रतिवेदन को स्वीकार करते समय तक सभा ने समिति की सिफारिश को स्वीकार नहीं किया था।[5]

सदस्यों की सुविधा के लिए म॰ पू॰ 10 बजे से पहले सूचनाएं जमा कराने के लिए सूचना कार्यालय के बाहर एक बक्सा रखा जाता है। वे सूचनाएं जोकि बैठक के प्रारम्भ होने से पहले दी जानी अपेक्षित होती हैं जैसे ध्यान दिलाने की सूचना, विशेष उल्लेख विशेषाधिकार का प्रश्न, शून्य काल के उल्लेख आदि म॰ पू॰ 10 बजे से पहले ही बक्से में डाले जा सकते हैं। बक्से को म॰ पू॰ 10 बजे खोला जाता है और उसमें डाली गयीं सूचनाएं म॰ पू॰ 10 बजे प्राप्त की गयी मानी जाती हैं। ऐसी सूचनाओं की परस्पर अग्रता को बैलट द्वारा निश्चित किया जाता है। सदस्यों के निजी कर्मचारियों द्वारा सूचनाएं जमा कराने के लिए संसद् भवन के स्वागत कार्यालय के बाहर भी एक बक्सा रखा जाता है। सदस्यों को प्रत्येक सत्र में संसदीय समाचार में एक पैराग्राफ द्वारा इस व्यवस्था के बारे में सूचित किया जाता है।[6]

संशोधन, प्रस्ताव, प्रश्न, ध्यान दिलाने की सूचना, विशेष उल्लेख आदि जैसे विभिन्न प्रयोजनों के लिए सूचना देने हेतु सूचना के मानक मुद्रित फार्म सदस्यों के प्रयोग के लिए सूचना कार्यालय में रखे जाते हैं।

सामान्यत: नियमों के अधीन निर्धारित सूचना की अवधि में सूचना देने के लिए आग्रह किया जाता है और जो प्रस्ताव या संकल्प निर्धारित अवधि में नहीं आते उन्हें प्राय: प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं दी जाती। तथापि, सूचनाओं की अवधि निश्चित करने वाले नियम सभापति को यह शक्ति भी प्रदान करते हैं कि उपयुक्त मामलों में सूचनाओं की अवधि के लिए आग्रह न किया जाए और किसी विशेष मामले को लघु सूचना पर या यहां तक कि बिना सूचना ही स्वीकार कर लिया जाए।

प्रश्नों और संकल्पों के संबंध में सूचना की अवधि का परिकलन करने के लिए वह दिन जब सूचना प्राप्त होती है और वह दिन जब प्रश्न का उत्तर दिया जाना है या संकल्प को प्रस्तुत किया जाना है, छोड़ दिया जाता है।

नियमों द्वारा या सभापति के निदेश के अधीन अपेक्षित मुख्य सूचनाएं और सूचनाओं की अवधि निम्नलिखित है:—

(1) प्रश्न–15 पूर्ण दिन;[7] (2) आधे घंटे की चर्चा–3 दिन;[8] (3) गैर–सरकारी सदस्यों के संकल्प–सूचना, लाटरी निकालने के दो दिन पूर्व और संकल्प का पाठ, लाटरी निकालने के दिन से 10 दिनों तक;[9] (4) संकल्पों/प्रस्तावों पर संशोधन –एक दिन;[10] (5) गैर–सरकारी सदस्यों के विधेयकों को पुर:स्थापित करने की अनुमति के लिए प्रस्ताव–एक माह;[11] (6) विधेयकों में संशोधन–एक दिन;[12] (7) विशेष उल्लेख–प्रस्तावित उल्लेख से एक दिन पहले म॰ प॰ 5 बजे तक;[13] और (8) कतिपय विधेयकों के संबंध में प्रस्ताव–2 दिन।[14]

सदस्य द्वारा किसी विधेयक या संकल्प पर संशोधनों की सूचना संबंधित मद को कार्यावलि में शामिल किए जाने से पूर्व अग्रिम रूप से दी जा सकती है।[15] ऐसे संशोधनों को उस दिन से एक दिन पहले सदस्यों में परिचालित किया जाता है जिस दिन के लिए संबंधित मद कार्यावलि में शामिल की गई है।

कोई भी सदस्य सदन में शपथ अथवा प्रतिज्ञान लेने और सभा में अपना स्थान ग्रहण करने से पहले सूचनाएं दे सकता है परन्तु वह सभा के सदस्य के रूप में प्रश्न पूछने अथवा संकल्प उपस्थित करने अथवा किसी विधेयक को पुर:स्थापित करने जैसे अपने कार्यों का तब तक निर्वहन नहीं कर सकता, जब तक कि उसने शपथ अथवा प्रतिज्ञान न ले लिया हो और सभा में अपना स्थान ग्रहण न कर लिया हो।

सभा की सेवा से निलंबित किये गये किसी सदस्य द्वारा पहले दी गयी सूचनाओं को उसके निलंबन की अवधि के दौरान कार्यावलि या प्रश्नों, संशोधनों आदि की सूचियों में शामिल नहीं किया जाता। उस अवधि के दौरान उस के द्वारा दी गयी किसी सूचना को भी स्वीकार नहीं किया जाता।

अब राज्य सभा में शून्य काल के दौरान अविलम्बनीय लोक महत्त्व के मामलों को उठाने की प्रथा समाप्त कर दी गई है। तथापि, कभी–कभी सभापति कतिपय मामलों को उठाने की अनुमति दे सकते हैं जिन्हें संसदीय समाचार भाग–I में अनुमति से उठाए गए मामले के रूप में इंगित किया जाता है। लोक महत्त्व के मामलों को उठाने के लिए इस आशय के नियमों[16] को शामिल करके विशेष उल्लेख की प्रक्रिया को सुदृढ़ किया गया है।

सूचनाओं का परिचालन

महासचिव द्वारा प्रत्येक सदस्य को ऐसी प्रत्येक सूचना या अन्य किसी पत्र की प्रति, जोकि इन नियमों के अन्तर्गत सदस्यों को उपलब्ध करायी जानी अपेक्षित है, परिचालित करने का हर सम्भव प्रयास किया जाता है।[17] नियमों के अनुसार महासचिव द्वारा निम्नलिखित पत्रों को परिचालित करना आवश्यक होता है:–(1) सत्र के आमंत्रण;[18] (2) उपसभापति के चुनाव की सूचना;[19] (3) कार्यावलि;[20] और (4)विधेयकों/संकल्पों पर संशोधनों की सूचियां।[21] किसी सूचना या अन्य पत्र की प्रति यदि ऐसे ढंग से और ऐसे स्थान पर रखी जाती है जैसा कि सभापति समय–समय पर आदेश दें तो ऐसी अवस्था में सूचना या अन्य पत्र को प्रत्येक सदस्य के प्रयोग के लिए उपलब्ध कराया गया समझा जायेगा।[22]

सूचना में संशोधन संबंधी सभापति की शक्ति

यदि सभापति की राय में कोई सूचना ऐसे शब्दों, वाक्यांशों या अभिव्यक्तियों को समाविष्ट करती है जो

कि विवादी, असंसदीय, व्यंग्यात्मक, असंगत, शब्दाडम्बरपूर्ण या अन्यथा अनुपयुक्त है तो वह उस सूचना के परिचालन से पहले अपने विवेकानुसार उसमें संशोधन कर सकते हैं।[23]

संशोधनों की सूचनाओं, जोकि बोधगम्य नहीं हैं या जो संबंधित विधेयक का खंड बनती हैं या ऐसे संकल्प या प्रस्ताव जो अबोधगम्य या अव्याकरणिक हैं, को सदस्यों में परिचालित किये जाने से पहले, यदि आवश्यक हो, तो संबद्ध सदस्यों के साथ विचार-विमर्श करके उपयुक्त रूप से सम्पादित किया जाता है।

सूचनाओं का व्यपगत हो जाना

सदन के सत्रावसान पर, विधेयक पुर:स्थापित करने की अनुमति चाहने वाली सूचनाओं को छोड़कर अन्य सभी लम्बित सूचनाएं व्यपगत हो जाती हैं और यदि सदस्य उस मामले को अगले सत्र में उठाना चाहता है तो उसे फिर से सूचना देनी होती है। तथापि, ऐसे विधेयक पुर:स्थापित करने की अनुमति के लिए भी नयी सूचना की आवश्यकता होती है जिसके संबंध में पहले मंजूरी या सिफारिश दी गई हो और यदि पहले दी गयी मंजूरी या सिफारिश प्रभावी न रही हो।[24]

> एक सदस्य ने 18 मार्च, 1963 को एक समाचारपत्र के विरुद्ध विशेषाधिकार के भंग के मामले की सूचना दी थी। 20 मार्च, 1963 को राज्य सभा का सत्रावसान कर दिया गया। सदस्य ने नयी सूचना दी ''यदि उसकी पूर्व सूचना पर कोई कार्रवाई नहीं की गयी हो तो'', तत्पश्चात् मामले को विशेषाधिकार समिति के पास भेजा गया।[25]

समिति के समक्ष लंबित कोई कार्य केवल सदन के सत्रावसान के कारण से ही व्यपगत नहीं हो जाता और समिति ऐसे सत्रावसान के बावजूद भी अपना कार्य जारी रखती है।[26]

राष्ट्रपति की सिफारिश

नये राज्यों के निर्माण और वर्तमान राज्यों के क्षेत्रों, सीमाओं या नामों में परिवर्तन संबंधी विधेयकों[27] और कराधान को प्रभावित करने वाले विधेयक जिनमें राज्य दिलचस्पी रखते हों[28], के संबंध में राज्य सभा में विधेयकों के पुर:स्थापन के लिए राष्ट्रपति की सिफारिश की आवश्यकता होती है। ऐसे विधेयक, जिसमें भारत की संचित निधि से व्यय शामिल है, पर विचार करने और उसे पारित करने के लिए भी राष्ट्रपति की सिफारिश आवश्यक होती है।[29]

राष्ट्रपति की प्रत्येक सिफारिश को संबद्ध मंत्री द्वारा लिखित में निम्न रूप में महासचिव को प्रेषित किया जाता है:

> राष्ट्रपति ने प्रस्तावित विधेयक, प्रस्ताव, संकल्प या संशोधन की विषयवस्तु सूचित किये जाने पर विधेयक के पुर:स्थापन पर या संशोधन उपस्थित करने पर अपनी पूर्व अनुमति दी है या वह सभा में विधेयक के पुर:स्थापन या प्रस्ताव, संकल्प या संशोधन उपस्थित करने की सिफारिश करते हैं या सभा को विधेयक पर विचार करने की सिफारिश करते है।[30]

जब लोक सभा द्वारा पारित विधेयक राज्य सभा में भेजा जाता है तब संबंधित मंत्री विधेयक को, लोक सभा द्वारा पारित रूप में राज्य सभा में विचार करने के लिए आवश्यक सिफारिश के साथ भेजते हैं। यद्यपि जब विधेयक सभा में लंबित था तब इसी प्रकार की सिफारिश प्राप्त की गयी थी और लोक सभा को पहले भेजी गयी थी। अन्य शब्दों में विधेयक के संबंध में प्रत्येक सदन के लिए एक पृथक सिफारिश की आवश्यकता होती है।[31]

सदस्यों द्वारा अनुपालन किये जाने वाले नियम

जब सभा की बैठक हो रही हो या सभा में बोलते हुए सदस्यों को कुछ नियमों का अनुपालन करना होता है।[32]

संचालन नियमों से संबद्ध अध्याय 9 में इनका उल्लेख किया गया है। तथापि, उनमें से **न्यायाधीन** मामलों का नियम संसदीय प्रक्रिया में विशेष महत्त्व रखता है और अत: उसे विस्तार में दिये जाने की आवश्यकता है।

न्यायाधीन मामलों पर चर्चा

सदस्य किसी ऐसे तथ्य का उल्लेख नहीं कर सकते जिस पर न्यायिक निर्णय लंबित हो।[33] संविधान के उपबंधों और नियमों के अधीन संसद् में भाषण की स्वतन्त्रता है।[34] इस स्वतन्त्रता पर कुछ प्रतिबन्ध कुछ सीमा तक स्वेच्छा से लगाये गये हैं। एक प्रतिबन्ध यह है कि न्यायालय में न्याय-निर्णयन हेतु लम्बित मामलों पर सभा में चर्चाएं नहीं करनी चाहिये ताकि न्यायालय ऐसे मामलों पर विचार करते समय न्यायालय में विचारण की परिधि के बाहर कही गयी किसी भी बात से अप्रभावित रहते हुए कार्य करें। यह प्रश्न कि क्या कोई मामला विशेष **न्यायाधीन** है, का निर्णय सभापति द्वारा प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर किया जाता है।

नियमों के अन्तर्गत, ऐसा कोई भी मामला सदन में प्रश्नों,[35] प्रस्तावों[36], संकल्पों[37] के रूप में नहीं उठाया जा सकता जोकि किसी न्यायालय में न्याय-निर्णयन के अधीन हो, जिसका कार्यक्षेत्र भारत के किसी भी भाग में हो। **न्यायाधीन** का नियम विधेयकों पर लागू नहीं होता।

> एक आपत्ति यह की गई थी कि मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों की सुरक्षा), विधेयक 1986 को सभा में विचारार्थ नहीं लिया जा सका क्योंकि भरण-पोषण संबंधी कुछ मामले न्यायालयों में लंबित थे। सभापति ने विनिर्णय दिया:
>
> > ...यह एक प्रभुत्वसंपन्न निकाय है और इसे किसी भी मामले पर विधि बनाने की शक्ति है चाहे यह न्यायालय में लंबित है या नहीं।[38]

अन्य बातों के साथ-साथ न्यायाधीन नियम के क्षेत्र के बारे में विचार करने के लिए पीठासीन अधिकारियों की एक समिति नियुक्त की गई। अत: समिति ने निम्नलिखित निर्देश दिये हैं जो कि मात्र निदर्शी है; व्यापक नहीं:

(1) भाषण की स्वतन्त्रता एक मूलभूत अधिकार है जबकि न्यायाधीन का नियम स्वेच्छा से लागू किया गया एक प्रतिबन्ध है। अत: जहां आवश्यकता हो, वहां भाषण की स्वतन्त्रता को वरीयता दी जानी चाहिये।

(2) विशेषाधिकार के मामलों में न्यायाधीन के नियम को लागू नहीं किया जाता।

(3) न्यायाधीन का नियम सामान्यतया विधि-निर्माण पर लागू नहीं होता।

(4) न्यायाधीन का नियम भारत के किसी भाग में सिविल और दाण्डिक न्यायालयों में और सेना न्यायालयों के समक्ष विचाराधीन कार्रवाइयों पर लागू होना चाहिए और यह नियम सामान्यतया अन्य न्यायिक अथवा अर्द्ध-न्यायिक निकायों जैसे अधिकरणों आदि पर लागू नहीं होना चाहिए जो कि प्राय: तथ्यों का पता लगाने वाले निकाय होते हैं।

(5) न्यायाधीन का नियम, प्रश्नों, विवरणों, प्रस्तावों (विधेयक को पुर:स्थापित करने की अनुमति, विधेयक के विचारार्थ, विधेयक को प्रवर/संयुक्त समिति को भेजने, किसी विधेयक पर राय जानने के लिये उसे परिचालित करने तथा विधेयक को पारित किये जाने से संबंधित प्रस्तावों को छोड़कर), संकल्पों तथा अन्य वाद-विवाद (डिबेट्स) पर लागू होता है।

(6) न्यायाधीन का नियम न्यायालय में विचाराधीन किन्हीं विशिष्ट मामलों पर ही लागू होता है। इसके लिए मामले के सम्पूर्ण क्षेत्र को नहीं रोका जाता ।

(7) परस्पर संबद्ध मामलों में जिनका एक भाग तो न्यायाधीन हो और एक भाग न्यायाधीन न हो, ऐसे मामलों में न्यायाधीन भाग से इतर भाग पर चर्चा की अनुमति दी जा सकती है।

(8) न्यायाधीन के नियम को केवल उसी अवधि के दौरान लागू किया जाता है जब उस मामले पर न्यायालय में या किसी सैनिक न्यायालय में सक्रिय रूप से विचार चल रहा हो इसका अर्थ निम्न प्रकार से होगा:—

(क) दाण्डिक मामलों में	–	आरोप पत्र दायर करने के समय से लेकर निर्णय दिये जाने तक।
(ख) सेना न्यायालयों में	–	आरोप लगाये जाने के समय से लेकर आरोपों की पुष्टि होने तक।
(ग) सिविल वादों में	–	मुद्दे तैयार किये जाने से लेकर निर्णय दिये जाने तक।
(घ) रिट याचिकाओं में	–	उनके स्वीकार किये जाने के समय से लेकर आदेशों के पारित होने तक।
(ङ) व्यादेश याचिकाएं	–	उनके स्वीकार किये जाने के समय से आदेशों के पारित होने तक।
(च) अपीलें	–	अपील को स्वीकार किए जाने के समय से निर्णय दिये जाने तक।[39]

किसी राज्य में मंत्री के रूप में नियुक्त किये गए सदस्य का कार्यवाही में भाग लेना

संसद् के किसी सदन के सदस्य के किसी राज्य में मंत्री पद पर नियुक्त किये जाने से वह सदन की सदस्यता के अयोग्य नहीं हो जाता और वह विधानमंडल में सदस्य निर्वाचित हुए बिना ही सदन का सदस्य और साथ ही साथ राज्य में मंत्री पद पर भी 6 माह की अवधि तक के लिए बने रह सकता है। विगत में एक से भी अधिक बार ऐसे सदस्यों द्वारा सदन की कार्रवाई में भाग लेने या मतदान में उपस्थित होने के संबंध में मुद्दे उठाये जाते रहे हैं। एक मामले में, राज्य सभा के एक सदस्य ने जिन्हें किसी राज्य में मंत्री के रूप में नियुक्त किया गया था, सदन की कार्यवाही में हिस्सा लिया। इस प्रकार के एक अन्य मामले में राज्य सभा के एक सदस्य जिन्हें राज्य के मुख्य मंत्री के रूप में नियुक्त किया गया था, संविधान (उनसठवां संशोधन) विधेयक, 1988 पर मतदान करने के लिये सदन में उपस्थित थे। सभापति महोदय ने इन अवसरों पर यह टिप्पणी की थी:

> किसी संसद्-सदस्य जिसने राज्य में मंत्री के रूप में कार्यभार ग्रहण किया है, द्वारा सदन की कार्रवाई में भाग लेते रहने की उपयुक्तता के प्रश्न पर मैं मात्र इतनी-सी टिप्पणी करूंगा कि यह कुछ विचित्र-सा लगता है कि राज्य में मंत्री के रूप में कार्यरत ऐसा कोई संसद्-सदस्य राज्य सभा में भी उपस्थित रहे और उसकी कार्रवाई में भाग ले।[40]

अत: सभापति महोदय ने अन्य किसी अवसर पर यह कहा कि वह संबद्ध सदस्य को मत न देने के लिये निदेश नहीं दे सके। विधेयक पर मत देने वाले संबद्ध सदस्य ने यह कहा कि ''मेरे व्यक्तिगत हित से राष्ट्रीय हित की सर्वोच्चता कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है।''[41]

किसी व्यक्ति के खिलाफ आरोप लगाया जाना

संविधान में किसी भी सदस्य को सभा में वाक्-स्वातंत्र्य प्रदान किया गया है और उसे सदन में कही गई किसी भी बात के लिए किसी भी न्यायालय, सिविल या दांडिक कार्यवाही से उन्मुक्ति प्रदान की गई है।[42] तथापि, यह संवैधानिक विशेषाधिकार संविधान के अन्य उपबंधों तथा सदन के नियमों के अध्यधीन हुए हैं।

सदन के एक नियम के अधीन यह उपबंध किया गया है कि उच्च पदाधिकारियों के आचरण के संबंध में संविधान के अधीन उचित ढंग से कोई सारगर्भित प्रस्ताव लाए जाने के अलावा, चर्चा नहीं की जानी चाहिए।[43] संविधान में यह उपबंध किया गया है कि उसमें बताए गए ढंग से कुछ पदाधिकारियों, उदाहरण के लिए—राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, उपसभापति, उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश, भारत के नियंत्रक महालेखापरीक्षक, मुख्य चुनाव आयुक्त आदि, के आचरण पर चर्चा की जा सकती है। अन्य उच्च कृत्यकारियों, जैसे राज्यपालों, के आचरण पर सभापति द्वारा स्वीकृत रूप में, पेश किये गये यथोचित प्रस्तावों पर चर्चा की जा सकती है। वस्तुत:, सदन ने राज्यपालों द्वारा अपनी सरकारी हैसियत से विभिन्न रूपों में कार्यकरण किए जाने के संबंध में चर्चा की है।

> सदन ने (1) किसी राज्य के राज्यपाल को बर्खास्त किए जाने की सिफारिश[44] और (2) किसी राज्य में सरकार को बर्खास्त करने में राज्यपाल द्वारा की गई कार्यवाही की निन्दा करने[45] संबंधी प्रस्तावों पर चर्चा की है। तथापि, दोनों ही प्रस्ताव अस्वीकृत हो गए थे।
>
> सदन ने राज्यपालों द्वारा विधान सभाओं के विघटन,[46] सत्रावसान,[47] निलंबन,[48] के संबंध में ध्यानाकर्षण प्रस्ताव पर चर्चा अथवा अल्पकालिक चर्चा भी की है।
>
> राज्यपालों की भूमिका, शक्ति, कृत्यों और नियुक्ति की पद्धति संबंधी मामलों पर भी ध्यानाकर्षण प्रस्तावों और अल्पकालिक चर्चा के माध्यम से चर्चा की गयी है।[49]

जहां तक मुख्य मंत्री या किसी राज्य सरकार के मंत्री के आचरण का संबंध है, यदि वह मामला संघ सरकार के क्षेत्राधिकार के भीतर आता है या उसके विचाराधीन है, तो उस पर चर्चा की जा सकती है। ऐसे कुछ उदाहरण भी विद्यमान हैं जब मुख्य मंत्रियों/राज्यों के मंत्रियों से संबंधित मामलों को राज्य सभा में उठाया गया है।

> किसी राज्य सरकार के मंत्री द्वारा अनुसूचित जातियों के विरुद्ध की गयी कुछ अपमानजनक टिप्पणियों के संबंध में अल्पकालिक चर्चा की गयी थी।[50]
>
> एक अल्पकालिक चर्चा का संबंध सरकार द्वारा की गई कार्यवाही से था जो कार्रवाई सरकार ने राष्ट्रपति को प्रस्तुत किए गए उस ज्ञापन पर की जिसमें एक मुख्य मंत्री के विरुद्ध भ्रष्टाचार और शक्ति के दुरुपयोग का आरोप लगाया गया था।[51]
>
> किसी मुख्य मंत्री के विरुद्ध लगाये गए आरोपों संबंधी जांच आयोग का प्रतिवेदन भी प्रस्ताव का विषय बना।[52]
>
> एक भूतपूर्व राज्य मंत्री पर लगे कतिपय आरोपों के संबंध में उड़ीसा सरकार को केन्द्रीय जांच ब्यूरो के प्रतिवेदन और उस पर मंत्रिमंडलीय उप-समिति के निष्कर्षों की एक प्रति देने में केन्द्रीय गृह मंत्रालय की कथित अनिच्छा के संबंध में एक ध्यानाकर्षण प्रस्ताव भी सभा में लाया गया था।[53]
>
> संविधान को भीतर से कमजोर बनाने के संबंध में मुख्य मंत्री का वक्तव्य ध्यानाकर्षण प्रस्ताव का विषय बना था।[54]
>
> जब किसी सदस्य ने किसी राज्य के मुख्य मंत्री पर की गयी किसी अन्य सदस्य की कतिपय टिप्पणियों पर इस आधार पर औचित्य का प्रश्न उठाया कि किसी मुख्य मंत्री के आचरण पर केवल मूल प्रस्ताव के आधार पर ही चर्चा की जा सकती है, तो तब उपसभापति ने कुछ पूर्वोदाहरणों को उद्धृत करते हुए यह निर्णय दिया कि किसी मुख्य मंत्री के आचरण पर चर्चा करने के लिए कोई मूल प्रस्ताव सभा में लाने का इस प्रकार का कोई उपबंध नहीं है।[55]

नियमत:, कोई भी सदस्य किसी भी अन्य सदस्य या दूसरी सभा के किसी सदस्य के विरुद्ध तब तक कोई अपमानजनक या आपत्तिजनक आरोप नहीं लगा सकता जब तक कि आरोप लगाने वाले सदस्य ने सभापति को और सम्बद्ध मंत्री को भी पूर्व-सूचना न दे दी हो, ताकि मंत्री उस मामले में उत्तर देने के प्रयोजनार्थ मामले की जांच करा सके।[56] इसके बावजूद, सभापति महोदय किसी भी समय किसी भी सदस्य को इस प्रकार का कोई आरोप लगाने से रोक सकते हैं। यदि उनका यह मत हो कि इस प्रकार का

आरोप सभा की गरिमा के लिए उचित नहीं है अथवा ऐसा आरोप लगाने से कोई जनहित सिद्ध नहीं होगा।[57]

जब किसी सदस्य द्वारा किसी अन्य सदस्य या मंत्री के विरुद्ध आरोप लगाये जाते हैं और वह सदस्य या मंत्री उन आरोपों से इंकार कर देता है तो यह इंकार सामान्यत: उस सदस्य को स्वीकार कर लेना चाहिए जिसने यह आरोप लगाये हैं। सभापति उस सदस्य को आरोप साबित करने के लिए भी कह सकते हैं और जांच के पश्चात् सभा को अपने निष्कर्षों के परिणाम से अवगत करा सकते हैं।[58]

सामान्यत:, जब कोई सदस्य कोई पूर्व सूचना दिये बगैर ही आरोप लगाता है तब उस विषय से संबंधित नियम के प्रावधानों का सहारा लिया जाता है और सदस्य को नियम का पालन करने के लिए कहा जाता है। कई मामलों में, यह आरोप कार्यवाही का हिस्सा बन जाते हैं और यदि उनका प्रतिवाद न किया जाए, तो उससे संबद्ध सदस्य का सम्मान और प्रतिष्ठा प्रभावित हो सकती है। अत:, जहां ऐसे कोई आरोप अभिलिखित हो चुके हों, जिस मंत्री या सदस्य के विरुद्ध आरोप लगाये गये हैं, उसे उसी दिन या बाद में स्थिति को स्पष्ट करने के लिए सदन में वक्तव्य देने की अनुमति दी जाती है और उससे मामला समाप्त हो जाता है।[59]

जहां तक सदन में किसी बाहरी व्यक्ति पर आरोप लगाये जाने का संबंध है, प्रथा और परिपाटी यह है कि किसी ऐसे व्यक्ति के नाम का उल्लेख नहीं किया जा सकता जो सभा में अपना बचाव नहीं कर सकता।[60] तथापि, यदि ऐसा आरोप पुलिस अथवा किसी अन्य जांच प्राधिकरण द्वारा छानबीन के किसी मामले की विषय-वस्तु बन जाता है तो पुलिस अथवा जांच प्राधिकरण सदस्य के पास नहीं जा सकता और उसकी सूचना के स्रोत को प्रकट करने अथवा उसके पास उपलब्ध साक्ष्य को अर्पित करने के लिए नहीं बुला सकता जिससे पुलिस अथवा जांच प्राधिकरण को उनकी जांच में मदद मिल सके। विशेषाधिकार संबंधी समिति ने कार्यवाही निर्धारित की हुई है जिसका ऐसे मामलों में अनुसरण किया जाना चाहिए, जैसा कि विशेषाधिकारों से संबंधित अध्याय-8 में उल्लेख किया गया है।

व्यक्तिगत स्पष्टीकरण

कोई सदस्य सभापति की अनुमति से कोई भी व्यक्तिगत स्पष्टीकरण दे सकता है यद्यपि सदन के समक्ष कोई मामला नहीं है, लेकिन इस स्थिति में कोई भी वाद-विवाद योग्य मामला नहीं उठाया जा सकता और कोई भी वाद-विवाद शुरू नहीं किया जाना चाहिए।[61]

> एक सदस्य ने बर्दवान में हुई एक घटना के संबंध में वक्तव्य दिया जिसके बारे में कुछ दिन पहले एक अन्य सदस्य द्वारा सदन में उल्लेख किया गया था। एक औचित्य प्रश्न उठाया गया था कि सदस्य को ऐसे मामले के संबंध में, जोकि व्यक्तिगत रूप से उससे संबंधित नहीं है बल्कि केवल एक राजनैतिक दल से संबंधित है, वक्तव्य देने की अनुमति दी जा सकती है या नहीं। सभापति ने तत्कालीन नियम 203 (वर्तमान 241 नियम का तद्नुरूपी) का उल्लेख करते हुए यह निर्णय दिया कि सदस्य ने सदन में मुद्दे को उठाने के लिए सभापति की पूर्वानुमति नहीं ली थी अत: उनका संदर्भाधीन वक्तव्य सदन में देना उचित नहीं था। वह यह दर्शाने के लिए घटना के बारे में एक दल की व्याख्या प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहे थे कि उस दल के विरुद्ध की गई आलोचना न्यायोचित नहीं थी। इससे वाद-विवाद योग्य मामला पुर:स्थापित हो गया जोकि नियम के अन्तर्गत अनुज्ञेय नहीं था। सभापति ने यह भी टिप्पणी की:
>
> > यह सच है कि व्यक्तिगत स्वरूप के स्पष्टीकरण के संबंध में सदन प्राय: दयालुता दर्शाता है और यह इस प्रकार के वक्तव्य को देने की अनुमति दे देता है, बशर्ते कि सभापीठ से पहले ही अनुमति प्राप्त कर ली गयी हो। लेकिन व्यक्तिगत स्पष्टीकरण की उचित सीमाओं से परे सामान्य तर्क और टिप्पणियां व्यवस्था से बाहर हैं। व्यक्तिगत स्पष्टीकरण की कृपा इस चेतावनी सहित प्रदान की जानी चाहिए कि कोई भी वाद-विवाद योग्य मामला न उठाया जाये और कोई वाद-विवाद नहीं किया जायेगा।[62]

एक अवसर पर एक सदस्य को 5 मार्च, 1969 को बिरला व्यवसाय के संबंध में हस्तक्षेप करते समय उप-प्रधान मंत्री और वित्त मंत्री द्वारा उस सदस्य के संबंध में की गई कतिपय टिप्पणियों के संबंध में व्यक्तिगत स्पष्टीकरण की अनुमति प्रदान की गई थी। सदस्य को लिखित में व्यक्तिगत रूप से सूचित किया गया कि उसके व्यक्तिगत स्पष्टीकरण में केवल बजट प्रस्तावों के संबंध में संक्षिप्त उल्लेख होना चाहिए अन्य मामले का नहीं। तथापि, सदस्य द्वारा व्यक्तिगत रूप से स्पष्टीकरण दे दिए जाने के पश्चात् अगले दिन सभापति ने जब यह देखा कि सदस्य ने उसे दी गई अनुमति का अतिक्रमण किया है, और उसने ऐसे मामलों का उल्लेख किया है जो उनके व्यक्तिगत स्पष्टीकरण के लिए प्रासंगिक नहीं है तो उन्होंने निम्नलिखित टिप्पणियां कीं:

> यह स्पष्टतया प्रक्रिया तथा सुस्थापित परिपाटियों के विरुद्ध है। मैं यह कहना चाहूंगा कि यदि इस तरह के मामलों में मेरा अनुग्रह चाहने वाले सदस्य इसका दुरुपयोग करेंगे तो मुझे इस बात पर गंभीरता से विचार करना पड़ेगा कि भविष्य में मुझे इस बात के लिए आग्रह करना है या नहीं कि इस तरह का विशेषाधिकार चाहने वाला सदस्य पहले से ही लिखित रूप में व्यक्तिगत स्पष्टीकरण का विवरण प्रस्तुत करे और उस वक्तव्य को देने से पहले मुझे दिखाए।[63]

एक अन्य अवसर पर जब एक मंत्री ने पहले सदन में दिए गए अपने किसी त्रुटिपूर्ण वक्तव्य के लिए क्षमा मांगते हुए एक व्यक्तिगत स्पष्टीकरण दिया परंतु साथ ही कुछ अन्य मामलों तथा विभिन्न अन्य नेताओं के नामों का भी उल्लेख किया तो एक सदस्य ने नियम 241 के अंतर्गत औचित्य प्रश्न उठाया। सभापति ने कहा कि वे भाषण को पढ़ेंगे और यदि उसमें कोई बात चर्चा योग्य मामले के निबंधन के अंतर्गत आती है तो वह उसे निकाल देंगे।[64]

अनुमति प्रदान कर दिए जाने पर संबद्ध सदस्य वक्तव्य देता है और उस पर कोई अन्य प्रश्न पूछने या स्पष्टीकरण मांगने की अनुमति नहीं दी जाती है जिसके पीछे यह अभिप्राय होता है कि व्यक्तिगत स्पष्टीकरण चर्चा का रूप न ले ले। जैसाकि कहा गया है, ''ये वक्तव्य सभा के अनुग्रह से दिए जाते हैं न कि अधिकार के रूप में, चूंकि सदन के समक्ष उस समय कोई प्रश्न नहीं होता है और कोई चर्चा भी नहीं की जा सकती।''[65]

जब किसी सदस्य ने मंत्री द्वारा दिए गए किसी व्यक्तिगत स्पष्टीकरण के संबध में स्पष्टीकरण मांगने के लिए कोई प्रश्न करना चाहा तो सभापति ने यह विचार व्यक्त किया कि: ''आप इस पर यहां चर्चा नहीं कर सकते... व्यक्तिगत स्पष्टीकरण के संबंध में कोई प्रश्न नहीं पूछे जाते हैं।''[66]

एक सदस्य द्वारा व्यक्तिगत स्पष्टीकरण देने के पश्चात् अनेक सदस्य उसके बारे में औचित्य-प्रश्न उठाना चाहते थे और उस मामले पर बहस करना चाहते थे। उपसभापति ने यह विचार व्यक्त किया कि उस पर कोई बहस करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। यदि सदस्य किसी मुद्दे पर बहस करना चाहते हैं तो उन्हें इस प्रयोजन के लिए समुचित प्रक्रिया का अनुपालन करना चाहिए। मंत्री एवं सदस्य दोनों के ही विचार कार्यवाही में प्रकाशित हुए हैं और यह मामला वहीं समाप्त हो गया।[67]

व्यक्तिगत स्पष्टीकरण के विषय क्षेत्र के संबंध में संसदीय कार्य की व्यवस्था से संबद्ध अध्याय-15 में पहले ही वर्णन किया गया है। इस संबंध में निम्नलिखित बातों को भी संबद्ध किया जा सकता है:

जब कोई सदस्य कोई व्यक्तिगत वक्तव्य देता है तो सभा यह मान लेती है कि वह ऐसा पूरी ईमानदारी से करता है। जैसाकि प्रोफ्यूमो मामले में 17 जून, 1963 को हुई बहस के दौरान श्री हेराल्ड विल्सन ने कहा था, ''यह सदन किसी प्रश्न या बहस के बिना इस पूर्वधारणा के आधार पर व्यक्तिगत वक्तव्य देने की स्वतंत्रता प्रदान करता है कि जो कुछ भी कहा है उसे ईमानदारी से कहा गया है।''[68]

राज्य सभा में अनुमति प्रदान किए गए कुछ व्यक्तिगत स्पष्टीकरणों का भी उल्लेख किया जा सकता है:

(क) *गुमराह करने वाले प्रेस समाचारों के बारे में स्पष्टीकरण देना*

एक सदस्य को सदन में दिए गए उसके वक्तव्य के बारे में गुमराह करने वाले कतिपय प्रेस समाचारों के बारे में स्पष्टीकरण देने की अनुमति प्रदान की गई थी।[69]

एक सदस्य ने कावेरी मामले के संबंध में उसके बारे में छपे एक प्रेस समाचार के संबंध में व्यक्तिगत स्पष्टीकरण दिया।[70]

एक सदस्य ने यह व्यक्तिगत स्पष्टीकरण दिया था कि इंडियन एक्सप्रेस-भवन मामले के संबंध में राज्य सभा में दिए गए उसके भाषण को काट-छांट कर छापा गया है और ऐसे कुछ अंशों को जिनमें उसने संबद्ध न्यायाधीश की प्रशंसा की थी, ''खेदपूर्ण धारणा'' को सही करने तथा तथ्यों को स्पष्ट करने के लिए प्रेस से निकाल दिया गया। जब एक अन्य सदस्य ने इस बारे में कुछ कहा तो सभापति ने इसे अभिलिखित न करने का निर्देश दिया और यह टिप्पणी की कि '' व्यक्तिगत स्पष्टीकरण पर कोई भी व्यक्ति कोई टिप्पणी नहीं कर सकता है।''[71]

(ख) *किसी सदस्य के बारे में की गई टिप्पणियों का खंडन करना*

एक सदस्य ने उस वक्तव्य का खंडन करने के लिए व्यक्तिगत स्पष्टीकरण दिया जो उसके द्वारा कथित रूप से केन्द्रीय कक्ष में दिया गया बताया गया था।[72]

(ग) *गिरफ्तारी संबंधी स्पष्टीकरण*

एक सदस्या ने अपनी गिरफ्तारी और उन परिस्थितियों के संबंध में व्यक्तिगत स्पष्टीकरण दिया, जिनके अंतर्गत उन्हें तिहाड़ जेल, दिल्ली में स्थानांतरित किया गया तथा राज्य सभा के सत्र में उपस्थित होने के लिए संसद् भवन लाया गया।[73]

(घ) *स्थिति की व्याख्या*

एक सदस्य ने अपने घर पर पड़े छापे आदि के संबंध में स्थिति को स्पष्ट करने के लिए व्यक्तिगत स्पष्टीकरण दिया। जब एक अन्य सदस्य ने यह औचित्य-प्रश्न उठाया कि व्यक्तिगत स्पष्टीकरण सदन के कार्य से संबद्ध नहीं है, तो उपसभापति ने स्पष्ट किया कि सदन के एक सदस्य के रूप में सदस्य की छवि मलिन होने के कारण उन्हें इसकी अनुमति दी गई।[74]

राज्य सभा के पांच सदस्यों को व्यक्तिगत स्पष्टीकरण देने की इजाजत दी गई क्योंकि समाचारपत्रों में प्रकाशित खबरों में राम स्वरूप गुप्तचर्या मामले संबंधी आरोप-पत्र में उनका नाम आया था।[75]

(ङ) *आरोपों का खंडन*

प्रधान मंत्री, श्रीमती इन्दिरा गांधी, ने एक विशिष्ट माह के उनके टेलीफोन-प्रभार के संबंध में एक सदस्य द्वारा लगाये गये आरोप का खंडन करते हुए सभा पटल पर एक विवरण रखा।[76]

एक अवसर पर सभापति ने सदन में निम्नलिखित घोषणा की:

> ''भारतीय मूल के कतिपय अनिवासी-भारतीयों द्वारा भारतीय कंपनियों के अधिग्रहण की बोलियों संबंधी ध्यानाकर्षण प्रस्ताव पर चर्चा के दौरान एक माननीय मंत्री ने अन्य बातों के साथ-साथ यह उल्लेख भी किया कि निवेशित धनराशि ''प्रधान मंत्री का धन, राजनीतिक धन तथा ऐसा धन है जो ईमानदारी से नहीं कमाया गया है।'' दुर्भाग्यवश सदन में प्रधान मंत्री के उपस्थित न होने के कारण यह टिप्पणी अभिलिखित हो गई और इसका खंडन नहीं किया जा सका। अब मुझे बताया गया है कि यह आरोप पूर्णतया निराधार है। चूंकि आरोप अभिलिखित हो गया है, इसलिए मैं यह उचित समझता हूं कि इसका खंडन भी अभिलिखित किया जाना चाहिए।''[77]

(च) *स्पष्टीकरण और जवाबी-स्पष्टीकरण*

सामान्य प्रथा यह है कि किसी सदस्य द्वारा व्यक्तिगत स्पष्टीकरण दिये जाने के बाद मूलत: टिप्पणी करने वाले सदस्य को जवाबी-स्पष्टीकरण देने की अनुमति नहीं दी जाती है। दोनों सदस्यों के वक्तव्य अभिलिखित हो जाने के बाद मामले को समाप्त समझ लिया जाता है।

> तथापि, एक सदस्य ने सदन में एक अन्य सदस्य द्वारा उनसे संबद्ध उल्लिखित मामले के संदर्भ में व्यक्तिगत स्पष्टीकरण दिया। अगले दिन परवर्ती सदस्य ने पूर्ववर्ती सदस्य द्वारा उनके विषय में उल्लिखित मामले के संदर्भ में व्यक्तिगत स्पष्टीकरण दिया।[78]

> एक मंत्री ने अन्य मंत्रालय के मंत्री की हैसियत से कार्य करते हुए अपने पूर्व पद के विरुद्ध किसी सदस्य द्वारा लगाये गये कतिपय आरोपों के संबंध में व्यक्तिगत स्पष्टीकरण दिया था। तीन दिन पश्चात् उस सदस्य ने मंत्री द्वारा लगाये गये आरोपों से इनकार करते हुए सभापति की अनुमति से एक वक्तव्य दिया। जब अनेक सदस्य उठकर खड़े हो गये, तो सभापति ने टिप्पणी की: ''यह नियम है कि वक्तव्य दिये जाने के बाद अन्य कोई व्यक्तिगत वक्तव्य नहीं होगा। किन्तु यदि किसी मंत्री या अन्य द्वारा तथ्य का वक्तव्य दिया गया हो, तो उसका प्रतिवाद किया जा सकता है।'' इसलिए इसकी अनुमति दी गई।[79]

(छ) *वक्तव्य का स्पष्टीकरण*

एक सदस्य को यह स्पष्ट करने हेतु व्यक्तिगत स्पष्टीकरण देने की अनुमति दी गई थी कि गलतफहमी के कारण उन्होंने एक अनुपूरक प्रश्न के दौरान समाचार पत्र में प्रकाशित हुए कार्टून का हवाला दे दिया था। उन्होंने सदन की कार्यवाही में से अपने उस अनुपूरक प्रश्न को निकाल देने का अनुरोध किया। सभापति ने यह निर्णय दिया कि सदस्य का वक्तव्य अभिलिखित किया जायेगा।[80]

एक सदस्य ने कहा कि डालमिया-जैन कंपनी समूह के बारे में जांच आयोग के प्रतिवेदन के संबंध में प्रस्ताव पर बोलते हुए उन्होंने कहा था कि चुनाव के लिए पंद्रह लाख रुपये एकत्रित किये गये थे। उस सदस्य को इस आंकड़े को सही करके इसके स्थान पर कई लाख रुपये कहने की अनुमति दी गई थी। उन्होंने यह भी कहा कि वह अपने वक्तव्य के समर्थन में सभा पटल पर एक पत्र रख रहे हैं।[81]

(ज) *मंत्रियों द्वारा व्यक्तिगत स्पष्टीकरण*

किसी मंत्री के लिए, जो दूसरे सदन का सदस्य है, सदन के सदस्यों द्वारा उसके विरुद्ध लगाये गये आरोपों या की गई टिप्पणियों का खंडन करने हेतु व्यक्तिगत स्पष्टीकरण देने पर कोई प्रतिबंध नहीं है।

अनेक बार ऐसे वक्तव्य दिये गये हैं।[82]

> एक राज्य मंत्री को उसके और उसके कैबिनेट मंत्री के बीच तथाकथित विवाद के संबंध में व्यक्तिगत स्पष्टीकरण देने की अनुमति दी गई थी। कुछ सदस्यों ने औचित्य का प्रश्न उठाया कि चूंकि संबंधित मंत्री सदन की सदस्या नहीं हैं, वह व्यक्तिगत स्पष्टीकरण नहीं दे सकतीं। उपसभापति ने औचित्य के प्रश्न को अवैध ठहराते हुए इस बात पर बल दिया कि यदि संबंधित मंत्री केवल लोक सभा की सदस्या रही होतीं, तो सभापीठ द्वारा उनके विरुद्ध किसी प्रकार के आरोप की अनुमति नहीं दी जाती। अनुमति इसलिये दी गई थी क्योंकि वह मंत्री के नाते सदन में आयी थीं... दोनों सदनों के सदस्यों के प्रश्नों के प्रति जवाबदेह थीं। दूसरी बात यह है कि सभापति ने अपने अधिकार का प्रयोग करते हुए उसे व्यक्तिगत स्पष्टीकरण देने की अनुमति दी थी और इसलिये वह सदन में आयी थीं।[83]

भाषणों का क्रम और उत्तर का अधिकार

जब किसी प्रस्ताव को उपस्थित करने वाला सदस्य प्रस्ताव पर अपने विचार व्यक्त कर लेता है, तो उसके बाद अन्य सदस्य उस प्रस्ताव पर उस क्रम में, जैसाकि सभापति उन्हें आमंत्रित करता है, अपने विचार व्यक्त कर सकते हैं। यदि इस प्रकार आमंत्रित कोई सदस्य अपने विचार व्यक्त नहीं करता है तो उसे चर्चा के किसी आगामी चरण में, सभापति की अनुमति के बिना, प्रस्ताव पर अपने विचार व्यक्त करने का हक नहीं होता है।[84]

उत्तर के अधिकार के प्रयोग को छोड़कर कोई भी सदस्य, सभापति की अनुमति के बिना, प्रस्ताव पर केवल एक बार अपने विचार व्यक्त कर सकता है।[85] प्रस्ताव को उपस्थित करने वाला सदस्य उत्तर के रूप में अपने विचार व्यक्त कर सकता है, और यदि प्रस्ताव किसी गैर-सरकारी सदस्य द्वारा उपस्थित किया जाता है, तो संबंधित मंत्री सभापति की अनुमति लेकर प्रस्ताव को उपस्थित करने वाले सदस्य के उत्तर देने के बाद अपने विचार व्यक्त कर सकता है (भले ही उसने चर्चा में पहले अपने विचार व्यक्त किये हों अथवा नहीं)।[86] तथापि, किसी प्रस्ताव अथवा विधेयक पर संशोधन उपस्थित करने वाले सदस्य को तब तक उत्तर देने का अधिकार नहीं है जब तक सभापति से इसकी अनुमति नहीं मिल जाती।[87]

समापन

किसी प्रस्ताव के किये जाने के बाद किसी भी समय कोई सदस्य यह प्रस्ताव उपस्थित कर सकेगा कि: ''प्रस्ताव पर अब मत लिया जाये,'' और जब तक कि सभापति को यह प्रतीत न हो कि प्रस्ताव इन नियमों का दुरुपयोग है या कि उचित वाद-विवाद के अधिकार का उल्लंघन करता है, सभापति यह प्रस्ताव करता है कि: ''प्रस्ताव पर अब मत लिया जाये।''[88] यदि यह प्रस्ताव स्वीकृत हो जाता है, तो उससे आनुषंगिक प्रस्ताव या प्रस्तावों पर, और अधिक वाद-विवाद किए बिना तुरन्त मत लिया जाता है, बशर्ते कि सभापति ने किसी सदस्य को उसका उत्तर देने का ऐसा अधिकार दे दिया हो।[89] यदि समापन-प्रस्ताव स्वीकृत नहीं होता है, तो तब प्रस्ताव पर वाद-विवाद उसी स्तर से पुन: आरम्भ होता है, जहां उसमें व्यवधान उत्पन्न किया गया था।[90]

> दंड विधि संशोधन विधेयक, 1952 पर विस्तारपूर्वक चर्चा की गई थी। एक सदस्य ने सभापति की अनुमति से वाद-विवाद के समापन का प्रस्ताव उपस्थित किया था। एक अन्य सदस्य ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया। उपसभापति ने घोषणा की कि प्रस्ताव पर उचित वाद-विवाद हो चुका है और उन्होंने प्रस्ताव उपस्थित किया कि: ''प्रस्ताव पर अब मत लिया जाये।'' उनका यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। तत्पश्चात् संबंधित मंत्री ने वाद-विवाद का उत्तर दिया। (हालांकि इसका उत्तर अगले दिन तक भी चलता रहा)।[91]
>
> हिन्दू विवाह और विवाह-विच्छेद विधेयक, 1952 को संयुक्त समिति को सौंपे जाने के प्रस्ताव पर लगभग दस घंटे चर्चा की गई थी। एक सदस्य ने प्रस्ताव उपस्थित किया कि: ''प्रस्ताव पर अब मत लिया जाये।'' सभापति ने प्रस्ताव पर मत लेने से पूर्व यह टिप्पणी की कि लगभग सभी विचारों को व्यक्त किया जा चुका है। तत्पश्चात् उन्होंने प्रस्ताव पर मत लिया। उस प्रस्ताव का समर्थन करने वाले सदस्यों की गणना करने के बाद वह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। तत्पश्चात् मंत्री ने उत्तर दिया।[92]
>
> दूसरी पंचवर्षीय योजना में ''सार्वजनिक सहयोग'' को सूचीबद्ध किये जाने संबंधी गैर-सरकारी सदस्य के एक संकल्प पर चर्चा चल रही थी। मध्याह्न पश्चात् 5.00 बजे से 5 मिनट पहले एक सदस्य ने प्रस्ताव उपस्थित किया कि: ''प्रस्ताव पर अब मत लिया जाये।'' प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। प्रस्ताव उपस्थित करने वाले सदस्य ने इसका उत्तर भी दिया। उसके बाद, संकल्प सभा की अनुमति से वापस लिया गया।[93]
>
> युवाओं के लिए एक स्थायी बोर्ड का गठन किये जाने से संबंधित गैर-सरकारी सदस्य के एक संकल्प के बारे में एक सदस्य ने प्रस्ताव उपस्थित किया कि: ''प्रस्ताव पर अब मत लिया जाये।'' प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ। चर्चा जारी रही।[94]

वाद-विवाद की परिसीमा

जब कभी किसी विधेयक के संबंध में किसी प्रस्ताव पर या अन्य किसी प्रस्ताव पर वाद-विवाद अनुचित रूप से लंबा हो जाये, तो सभापति सभा की राय मालूम करने के बाद वह वाद-विवाद समाप्त करने का समय नियत कर सकेगा।[95]

जब तक वाद-विवाद समय से पूर्व समाप्त न हो गया हो, तब तक सभापति किसी विधेयक या प्रस्ताव विशेष पर चर्चा करने या उसे पारित करने के लिये निर्धारित समय-सीमा के अनुसार, नियत समय पर तुरन्त ऐसे समस्त प्रस्तावों पर मत लेता है जो मूल प्रस्ताव पर सदन के निर्णय का निश्चय करने के लिये आवश्यक हों।[96]

> विशेष विवाह विधेयक, 1952 पर तीन दिन तक चर्चा चली थी। 4 मई, 1954 को, उपसभापति उस समय विद्यमान नियम 207 (वर्तमान नियम 245 के तत्समान नियम) के अधीन विधेयक पर वाद-विवाद को समाप्त करना चाहते थे। परन्तु उन्होंने सदन की राय जानने के बाद जब यह देखा कि बहुत से सदस्य वाद-विवाद को जारी रखना चाहते हैं तो वाद-विवाद जारी रहा।[97]

निर्णय के लिए प्रश्न

जिस विषय पर सदन का निर्णय अपेक्षित हो, उसका निर्णय सदस्य द्वारा किए गए प्रस्ताव पर सभापति द्वारा मत लेकर किया जाता है।[98] प्रस्ताव उपस्थित किए जाने के बाद, सभापति औपचारिक रूप से प्रस्ताव को सदन के विचारार्थ प्रस्तुत करता है। प्रस्ताव पर वाद-विवाद की समाप्ति पर, वह प्रस्ताव को सदन के समक्ष निर्णय के लिए इस प्रकार रखता है:–''प्रस्ताव यह है कि:'.....' (यहां सभापति, सदस्य द्वारा उपस्थित किए गए प्रस्ताव को उन्हीं शब्दों में दुहराता है) जो प्रस्ताव के पक्ष में हैं वे ''हां'' कहेंगे जो प्रस्ताव के विरुद्ध हैं, वे ''ना'' कहेंगे।'' यदि किसी प्रस्ताव में दो या उससे अधिक अलग प्रस्ताव हों तो सभापति द्वारा उन्हें अलग-अलग प्रस्तावों के रूप में उपस्थित किया जाए।[99]

जब तक सभापति द्वारा प्रस्ताव उपस्थित न कर दिया गया हो और सदन में वह प्रस्ताव सभा की सम्पत्ति नहीं बन जाये तथा प्रस्तावकर्त्ता के भाषण की समाप्ति के उपरान्त प्रस्ताव उपस्थित न कर दिया जाए, तब तक उस प्रस्ताव पर कोई वाद-विवाद नहीं हो सकता।

> एक बार एक मंत्री ने एक विधेयक पर संयुक्त समिति के प्रतिवेदन को प्रस्तुत करने के संबंध में समय बढ़ाने के लिए एक प्रस्ताव उपस्थित किया। इसके तुरन्त बाद ही प्रस्ताव पर कुछ सदस्यों तथा प्रधान मंत्री के भाषण हो गए। उस पर सभापति ने यह टिप्पणी की:
>
> > यहां पर दिए गए सभी भाषण पूर्णत: असंगत हैं क्योंकि मैंने सदन के समक्ष प्रस्ताव उपस्थित नहीं किया है।[100]

जब तक, विशेष रूप से नियमों के अधीन प्रावधान न किया गया हो अथवा सदन में इस संबंध में कोई सहमति न हो गई हो तब तक कोई प्रस्ताव, सामान्यत:, सदन के निर्णय के लिए प्रस्तुत नहीं किया जा सकता।

> कई अवसरों पर, सदन ने कार्य मंत्रणा समिति की संस्तुति अथवा सभा के मतैक्य से बिना चर्चा किए ही विधेयक पारित किए हैं।
>
> जब किसी सदस्य के निलंबन के आशय का प्रस्ताव उपस्थित करके उसे निलम्बित कर दिया जाता है तो उस प्रस्ताव पर किसी प्रकार के वाद-विवाद की अनुमति नहीं है।[101]

किसी प्रस्ताव पर सभापति द्वारा ''हां'' और ''ना,'' दोनों प्रकार के मत ले लेने के बाद, किसी भी सदस्य को उस प्रस्ताव पर बोलने की अनुमति नहीं है।[102]

सभा पटल पर पत्रों का रखा जाना

मंत्रियों द्वारा पत्रों का रखा जाना

सभा पटल पर पत्र, संविधान के विशिष्ट उपबंध, संसद् के परिनियमों, प्रक्रिया संबंधी नियमों अथवा उसके संबंध में प्रचलनों तथा परम्पराओं के अनुपालन स्वरूप रखे जाते हैं। कार्य-विन्यास से संबंधित अध्याय 15 में ऐसे अनेक प्रकार के पत्र सूचीबद्ध हैं जो संसद् में प्रस्तुत किए जाते हैं।

यदि कोई मंत्री सदन में किसी डिस्पैच या अन्य राज्य के पत्र (स्टेट पेपर) का उल्लेख करता है जिसे सदन में उपस्थित न किया गया हो, तो उसके लिए वह संबंधित पत्र सभा पटल पर रखना आवश्यक है।[103] तथापि, यह नियम ऐसे दस्तावेजों पर लागू नहीं होता है जिनके लिए मंत्री ने यह कहा हो कि उनकी प्रकृति इस प्रकार की है कि उन्हें प्रस्तुत करना लोक हित में असंगत होगा।[104]

डा॰ के॰ एन॰ काटजू, गृहकार्य तथा राज्य (स्टेट्स) मंत्री ने भारतीय प्रशासनिक सेवा (भर्ती) नियम, 1954 संशोधन संबंधी प्रस्ताव पर अपने भाषण के दौरान सरदार वल्लभभाई पटेल द्वारा लिखे गए व्यक्तिगत पत्र का कुछ वह अंश पढ़ा जो उस मामले से संबंधित था जिस पर चर्चा हो रही थी। व्यवस्था के प्रश्न के आधार पर किसी सदस्य ने यह मांग की कि उक्त पत्र सभा पटल पर रखा जाये। मंत्री ने कहा कि यह लोकहित में नहीं होगा कि कोई व्यक्तिगत पत्र सभा पटल पर रखा जाये। उस पर उपसभापति ने यह व्यवस्था दी कि यद्यपि उक्त पत्र व्यक्तिगत है, तथापि राज्य (स्टेट) के मामले से किसी सीमा तक संबंधित भी है, लेकिन चूंकि मंत्री ने यह कहा है कि इसे सभा पटल पर रखना लोक-हित में नहीं होगा तो इस पर नियम 211 (पुराना) का प्रथम परन्तुक लागू होगा और इसलिए इसे सभा पटल पर रखने की आवश्यकता नहीं है।[105]

वित्त मंत्रालय में राज्य मंत्री ने एक प्रश्न के उत्तर में कम्पनी लॉ बोर्ड की रिपोर्ट में से उद्धृत किया था। उस पर यह मांग की गई कि नियम 249 के अधीन उक्त रिपोर्ट सभा पटल पर रखी जाए। उसके लिए सभापति ने मंत्री को रिपोर्ट सभा पटल पर रखने का निर्देश दिया था। बाद में, मंत्री ने रिपोर्ट सभा पटल पर रखी थी।[106]

राजघाट पर सुरक्षा संबंधी चूकों से संबंधित ध्यान दिलाये जाने के प्रस्ताव पर चर्चा के दौरान, संबंधित मंत्री ने कराची स्थित भारतीय कंसुल जनरल की टिप्पणी उद्धृत की थी। यह टिप्पणी एक तार द्वारा विदेश मंत्रालय में प्राप्त हुई थी। यह मांग की गयी कि तार को सभा पटल पर रखा जाये। संबंधित मंत्री का कहना था कि वैसा करना जनहित में नहीं होगा। स्थिति की वास्तविकता को जानने के लिए, सभापति ने तार की एक प्रति मंगवा कर पढ़ी और यह निर्णय दिया कि चूंकि उस तार में कंसुल जनरल की टिप्पणी के अतिरिक्त अन्य बातें भी थीं, अत: उसको प्रकट करना जनहित में नहीं होगा। सभापति ने इस मामले में उद्धृत पत्रों को सभा पटल पर रखने से बचाने से संबंधित नियम 249 के परन्तुक को लागू किया और मंत्री की बात को सही ठहराया।[107]

19 सितम्बर, 1963 को एक मुख्य मंत्री के विरुद्ध आरोपों की जांच से संबंधित एक प्रश्न के उत्तर में प्रधान मंत्री, श्री जवाहरलाल नेहरू ने (कांग्रेस पार्टी की) एक उप-समिति जिसे (कांग्रेस अध्यक्ष द्वारा) आरोप सौंपे गए थे, के प्रतिवेदन का उल्लेख किया था। कुछ सदस्यों ने मांग की कि उस प्रतिवेदन को सभा पटल पर रखा जाये। प्रधान मंत्री ने बताया कि प्रतिवेदन उनकी अभिरक्षा में नहीं है। अगले दिन यही मांग पुन: की गई। प्रधान मंत्री ने, विशेषकर जबकि वह प्रतिवेदन समाचार पत्रों में छप चुका था और उन्हें उसे सदस्यों को दिखाने में कोई आपत्ति नहीं थी, इस मामले को सभापति के निर्णय के लिए छोड़ दिया। सभापति ने निर्णय दिया कि वह प्रधान मंत्री को प्रतिवेदन को सभा पटल पर रखने के लिए नहीं कहेंगे क्योंकि इससे एक गलत पूर्वोदाहरण स्थापित होगा और प्रतिवेदन पहले ही छप चुका है और वह एक सार्वजनिक दस्तावेज बन चुका है। उनका मानना था कि पुराने नियम 21 की दृष्टि से वह प्रतिवेदन न तो कोई डिस्पैच था न कोई राज्य पत्र। तत्पश्चात्, प्रधान मंत्री ने स्पष्ट किया कि वह उस पत्र को सभा पटल पर रखने के मार्ग में कोई बाधा खड़ी नहीं कर रहे थे। तब सभापति ने कहा कि उन्होंने उस पत्र को सभा पटल पर रखने में प्रधान मंत्री की तत्परता पर विचार किया है, परन्तु वह प्रधान मंत्री को उस पत्र को सभा पटल पर रखने के लिए नहीं कहेंगे क्योंकि वह कोई पूर्वोदाहरण स्थापित करना नहीं चाहते हैं।[108]

लेफ्टिनेंट जनरल कौल की पुस्तक ''दि अनटोल्ड स्टोरी'' से संबंधित एक तारांकित प्रश्न के अनुपूरक प्रश्नों के दौरान, एक सदस्य ने जानना चाहा कि क्या रक्षा मंत्री, जिन्हें यह प्रश्न संबोधित किया गया था, ''नेफा'' में पराजय पर जनरल हिंडरसन के प्रतिवेदन को सभा पटल पर रखने के लिए तैयार हैं। मंत्री ने बताया कि उस प्रतिवेदन को प्रकाशित करना जनहित में नहीं होगा। एक अन्य सदस्य ने औचित्य का प्रश्न उठाया कि यदि मंत्री उस प्रतिवेदन को सभा पटल पर रखने से बचने के लिए सभापीठ का आश्रय लेना चाहते हैं तो उन्हें (मंत्री जी को) प्रतिवेदन को सभा पटल, पर न रखने की अनुमति सभापति से लेनी होगी। सभापति ने टिप्पणी की: ''... सरकार को मेरी अनुमति के बिना भी यह आग्रह करने का अधिकार है कि पत्रों को सभा पटल पर रखना जनहित में नहीं है। परन्तु, उस स्थिति में सभा के सुचारू कार्यकरण के लिए सरकार को वैसा आग्रह सभापीठ के परामर्श से ही करना चाहिए।''[109]

जिस समय मंत्री ऐसे डिस्पैच या राज्य पत्र का संक्षेप या सारांश अपने शब्दों में प्रस्तुत कर देता है तो उस समय संगत पत्रों को सभा पटल पर रखना आवश्यक नहीं है।[110]

ध्यान दिलाये जाने की एक चर्चा का उत्तर देते हुए मंत्री ने दो-तीन पत्रों को उद्धृत किया था। एक सदस्य ने औचित्य का प्रश्न उठाकर उन पत्रों को सभा पटल पर रखने की मांग की। उपसभापति ने निर्णय दिया कि नियम 249 के परन्तुक के अधीन मंत्री ने जो कुछ कहा वह मंत्री के मुख्य वक्तव्य में भी सम्मिलित था और, इसलिए, उन पत्रों को सभा पटल पर रखना आवश्यक नहीं है।[111]

मंत्रियों के बीच हुए पत्राचार का सभा पटल पर रखा जाना

जुलाई-अगस्त, 1978 में हुए राज्य सभा के सत्र में बार-बार यह मांग की गई कि प्रधान मंत्री श्री मोरारजी देसाई और तत्कालीन गृह मंत्री श्री चरण सिंह के बीच हुए उस पत्राचार को सभा पटल पर रखा जाये जो एक-दूसरे के परिवार के सदस्यों पर भ्रष्टाचार के आरोपों के संबंध में था। 19 जुलाई, 1978 को इस विषय पर ध्यान दिलाये जाने की चर्चा का उत्तर देते हुए, प्रधान मंत्री ने अन्य बातों के साथ-साथ यह टिप्पणी की कि यह एक सर्वमान्य सिद्धांत है कि मंत्रियों के बीच होने वाला पत्राचार विशेषाधिकार वाले पत्राचार होते हैं। यह मंत्रियों के बीच विचारों के स्वतंत्र और बेलाग आदान-प्रदान के लिए अत्यंत आवश्यक है और इसे 'मे' की पुस्तक ''पार्लियामेंटरी प्रेक्टिस'' में भी मान्यता दी गई है। प्रधानमंत्री ने यह भी कहा कि वह सरकारी कामकाज के निष्पादन में इस सिद्धांत का अनुपालन करने का विचार रखते हैं।[112]

पत्रों को सभा पटल पर रखने की निरन्तर मांग और शोर-शराबे के कारण कई दिन तक सभा के समय से पहले स्थगित होते रहने के पश्चात् सभापति ने निम्नलिखित घोषणा की:

''सदस्यों को स्मरण होगा कि 24 जुलाई, 1978 को मैंने इस सभा को सूचित किया था कि प्रधान मंत्री और पूर्व गृह मंत्री श्री चरण सिंह के बीच हुए पत्राचार को सभा पटल पर रखने से संबंधित मामले का कोई हल मैं ढूंढूंगा। जैसाकि आप जानते हैं, मैंने इस मामले पर सभा के नेता, विपक्ष के नेता तथा सभा में अन्य ग्रुपों और दलों के नेताओं के साथ बातचीत की है। इसलिए, इस मामले के प्रति विपक्षी दलों की तीव्र भावनाओं से मैं अवगत हूं। 24 तारीख को सभा में दिये गये अपने वचन के पश्चात्, मैंने सभा के नेता से संपर्क स्थापित किया था और इस मामले पर विस्तार से बातचीत की थी।

मैंने सरकार को यह परामर्श दिया है कि बेहतर होगा कि यदि सरकार इस पत्राचार को विपक्ष के नेता और हमारी बैठकों में भाग लेने वाले सभा के अन्य दलों और ग्रुपों के नेताओं के अवलोकन के लिए सभापति के कक्ष में रख दे। उक्त पत्राचार के अवलोकन की औपचारिक पद्धति वही होगी जो दिसम्बर, 1974 में आयात लाइसेंस के मामले में अपनायी गई थी। सरकार मेरे सुझाव पर सहमत हो गई है। मुझे आशा है कि सभा के सभी सदस्य इससे संतुष्ट होंगे।[113]

तथापि, यह मामला सभा में उठाया जाता रहा। पहले यह मांग की जाती रही कि पत्राचार को सभा पटल पर रखा जाये और उसके पश्चात् इस विषय में अनियत-दिन-वाला प्रस्ताव स्वीकृत किये जाने का आग्रह

किया जाता रहा।[114] जहां तक इस पत्राचार को सभा पटल पर रखने का संबंध था, 3 अगस्त, 1978 को सभापति ने निम्नलिखित निर्णय दिया:

> इस सभा में दो मुद्दे उठाये गये। पहला मुद्दा कुछ सदस्यों द्वारा प्रधान मंत्री और पूर्व गृह मंत्री श्री चरण सिंह के बीच हुए पत्राचार को सभा पटल पर रखने के संबंध में दिये गये प्रस्तावों की सूचना से संबंधित था। सदस्यों को इस बात की जानकारी है कि यह मामला इस सत्र के आरंभ होने की तारीख अर्थात् 17 तारीख से ही इस सभा में वस्तुत: उठाया जाता रहा है। 27 जुलाई, 1978 को मैंने अपने इस निर्णय की घोषणा की थी कि राज्य सभा में विभिन्न दलों, ग्रुपों के नेता और कुछ अन्य सदस्य उक्त पत्राचार का अवलोकन सभापति के कक्ष में कर सकते हैं। मैंने यह घोषणा, हमारी बैठक में भाग लेने वाले सभी नेताओं से परामर्श करने के बाद की; उसके पश्चात् मैंने इस मामले में घोषणा की और सभा ने इसे स्वीकार कर लिया था और इसका किसी ने भी विरोध नहीं किया था। इस बात को ध्यान में रखते हुए, मेरा यह विचार है कि उक्त पत्राचार को सभा पटल पर रखने के संबंध में इन सदस्यों द्वारा उक्त प्रस्तावों की सूचनाओं के माध्यम से की गई मांग का प्रश्न नहीं उठता।[115]

पांडिचेरी लाइसेंस मामले के संबंध में सी॰बी॰आई॰ के प्रतिवेदन का सभा पटल पर रखा जाना

इससे पहले भी आयात लाइसेंस के मामले का उल्लेख किया गया है। यह भारतीय संसद् के प्रक्रियागत इतिहास में एक ऐतिहासिक पूर्वोदाहरण है और इसके बाद में, जब कभी भी उस जैसे या लगभग उस जैसे अवसर आए हैं, तब इस मामले में अपनाई गई प्रक्रिया का ही हमेशा संदर्भ दिया गया है।[116] इसलिए, यहां पर इसका और विस्तार से उल्लेख किया जा रहा है।

इस मामले की उत्पत्ति यहां से शुरू होती है जब एक सदस्य ने इस बात का उल्लेख किया कि संसद् के कतिपय सदस्य यह कह रहे हैं कि पांडिचेरी संघ राज्य क्षेत्र में यनम और माही में कतिपय फर्मों को लाइसेंस देने की सिफारिश करते हुए एक पत्र पर उनके जाली हस्ताक्षर किए गए हैं। तब पहली बार राज्य सभा में 13 अगस्त, 1974 को पूछे गए तारांकित प्रश्न सं 380 के अनुपूरक प्रश्न के रूप में यह मामला प्रकाश में आया।[117] इसके बाद एक ऐसी रिपोर्ट के आधार पर 27 अगस्त, 1974 को एक प्रश्न (तारांकित प्रश्न 730) पूछा गया। प्रश्न के उत्तर में वाणिज्य मंत्री ने मामले में लिप्त सदस्यों के नाम और जिन-जिन फर्मों को लाइसेंस जारी किए गए थे, उनके नाम बताए। उपसभापति ने मंत्री को सदस्यों के हस्ताक्षरों की जांच करने का निदेश दिया। उसी शाम को मंत्री ने यह कहते हुए एक वक्तव्य दिया कि 18 सदस्यों ने मुझसे कहा था कि उनके नाम से जाली हस्ताक्षर किए गए हैं।[118] 11 सितम्बर, 1974 को सदन ने 27 अगस्त, 1974 के प्रश्न से उत्पन्न सभी मामलों की जांच करने के लिए एक संसदीय समिति की नियुक्ति चाहने वाले प्रस्ताव पर चर्चा की। परंतु मत-विभाजन द्वारा प्रस्ताव अस्वीकृत हो गया।[119] फिर भी सदस्य इस मामले के संबंध में अपनी बात कहते रहे।

जब 4 दिसम्बर, 1974 को विपक्ष के कतिपय सदस्यों ने सरकार से यह चाहा कि वह इस मामले में केन्द्रीय जांच ब्यूरो का प्रतिवेदन सभा पटल पर रखे, तो तब गृह मंत्रालय में राज्य मंत्री इस बारे में इस आधार पर सहमत नहीं हुए कि केन्द्रीय जांच ब्यूरो का प्रतिवेदन एक गोपनीय तथा संवेदनशील दस्तावेज है जोकि इसे सभा पटल पर न रखा जाना ज्ञात परम्परा के विरुद्ध है और कि इसे सभा पटल पर रखा जाना लोक हित के लिए प्रतिकूल होगा। उन्होंने अपने समर्थन में सभापति (डा॰ ज़ाकिर हुसैन) द्वारा दी गई उपरोक्त व्यवस्था को भी उद्धृत किया। तब उपसभापति ने कहा: ''मैं डा॰ ज़ाकिर हुसैन की व्यवस्था का पालन करता हूं और मैं उसके विरुद्ध नहीं जा सकता''।[120]

इस विलंबित मुद्दे का समाधान करने के लिए उपसभापति ने यह सुझाव दिया कि ''इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि इस मामले में कोई भी पूर्वोदाहरण स्थापित नहीं किया जाएगा और न ही इस सदन में दिए गए किसी विनिर्णय (व्यवस्था) का उल्लंघन किया जायेगा,'' सरकार को सभी विपक्षी गुटों के सभी नेताओं और संसदीय कार्य मंत्री आदि को भी बुलाए जाने की संभावना पर विचार करना चाहिए और कि केन्द्रीय जांच ब्यूरो का प्रतिवेदन सभापति को सौंपा जा सकता है और कि ये सभी नेतागण गोपनीयता की शपथ लेकर इस प्रतिवेदन का अध्ययन कर सकते हैं ताकि वे किसी बात को प्रेस के लोगों के समक्ष प्रकट न करें।[121]

9 दिसम्बर, 1974 को प्रधान मंत्री, श्रीमती इन्दिरा गांधी ने केन्द्रीय जांच ब्यूरो का प्रतिवेदन सभा पटल पर रखे जाने के कारणों को स्पष्ट करते हुए सदन में एक वक्तव्य दिया; परंतु यह भी कहा कि ''किए जा रहे पूर्णत: अन्यायपूर्ण प्रचार को ध्यान में रखते हुए और विपक्ष की भावनाओं का आदर करते हुए तथा विधिक औचित्य बनाए रखते हुए,'' सरकार यह सुझाव स्वीकार करने को तैयार है कि विपक्ष के नेता विश्वास और गोपनीयता की शपथ लेते हुए, केन्द्रीय जांच ब्यूरो के प्रतिवेदन, साक्षियों द्वारा दिए गए बयानों और जांच के दौरान जब्त किए गए प्रलेखों, हस्त-लेख विशेषज्ञ की रिपोर्ट और यहां तक कि उन ''केस डायरीज़'' का भी अवलोकन कर सकते हैं जिन्हें अभियुक्त तक को भी नहीं दिखाया जाता।[122]

10 दिसम्बर, 1974 को सभापति ने कहा कि वे विभिन्न राजनीतिक दलों से परामर्श करेंगे और इस प्रयोजनार्थ बैठक के लिए तिथि निर्धारित करेंगे। सभा के निर्णय का महत्व सभापति की इन टिप्पणियों में प्रतिबिम्बित होता था: ''वास्तव में, मुझे यह कहना है कि इसका श्रेय इस सभा को मिलना चाहिए। हमने बहुत अच्छा कार्य किया है और यह अत्यन्त अच्छे वातावरण में होगा।''[123]

राष्ट्रपति तथा प्रधान मंत्री के बीच हुए पत्राचार को सभा पटल पर रखना

सदन में उस पत्र पर चर्चा की मांग की गई, जिसके समाचार पत्र में प्रकाशित मूल-पाठ के आधार पर ऐसा आभास मिलता है कि यह पत्र राष्ट्रपति द्वारा प्रधान मंत्री को लिखा गया है। सभापति ने चर्चा किये जाने की अनुमति नहीं दी और इस विषय पर विस्तृत व्यवस्था दी। उन्होंने अन्य बातों के साथ-साथ यह भी कहा कि यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात है कि राष्ट्रपति तथा प्रधान मंत्री के बीच हुए पत्राचार की गोपनीयता लोकतंत्र तथा राष्ट्र के व्यापक हित में बनाई रखी जाए।[124]

राज्य के पत्राचार को सभा पटल पर रखना

गुजरात में हुई हिंसा की घटनाओं के संबंध में एक प्रश्न पर पूछे गए विविध प्रश्नों के दौरान संबंधित मंत्री ने बताया कि उन्होंने इस बारे में गुजरात के मुख्य मंत्री को लिखा है और कि मुख्य मंत्री ने उसका उत्तर भी दे दिया है। एक सदस्य यह जानना चाहते थे कि क्या मंत्री महोदय उस उत्तर को सभा पटल पर रखेंगे। गृह मंत्री ने कहा कि उन्हें इसे सभा पटल पर रखने की कोई आवश्यकता नज़र नहीं आती। सभापति महोदय ने भी कहा कि यह पत्राचार सभा पटल पर नहीं रखा जा सकता।[125]

सभा पटल पर पत्र को रखने की सक्षमता

सरकार इस बात का निर्णय करती है कि कौन-सा प्रतिवेदन या पत्र सभा पटल पर रखा जाना है। जब कभी भी सदस्यों ने किसी ऐसे प्रतिवेदन या पत्र को सभा पटल पर रखे जाने का अनुरोध किया है तब सभापति ने सरकार को किसी भी प्रकार का कोई निर्देश देने से इनकार किया है।

जब एक मंत्री महोदय एक विधेयक को प्रवर समिति को सौंपे जाने के लिए एक प्रस्ताव उपस्थित कर रहे थे तब एक औचित्य-प्रश्न उठाया गया था कि विशेषज्ञ समिति के उस प्रतिवेदन को सभा पटल पर रखा जाए जिसका विधेयक के साथ संलग्न उद्देश्यों तथा कारणों के कथन में उल्लेख किया गया था। उपसभापति ने यह कहते हुए उस औचित्य-प्रश्न के विरुद्ध व्यवस्था दी कि वह उक्त प्रतिवेदन को प्रस्तुत करने के लिए सरकार को विवश नहीं कर सकते।[126]

सदन को ठक्कर आयोग के उस प्रतिवेदन पर चर्चा करनी थी जिसे 27 मार्च, 1989 को सभा पटल पर रखा गया था। मुद्दा यह था कि अंतरिम तथा अंतिम प्रतिवेदन, जो सभा पटल पर रखे गए हैं, क्या पूर्ण प्रतिवेदन हैं या क्या सरकार ने उसके कुछ अंश रोक लिए हैं। सरकार द्वारा अन्य संबंधित प्रपत्रों को सभा पटल पर रखे जाने से इंकार किये जाने पर विपक्ष ने चर्चा में भाग न लेने का निर्णय लिया था। सभापति ने अन्य बातों के साथ-साथ यह व्यवस्था दी थी कि जो राय महान्यायवादी ने सरकार को दी है और जो उन तक सरकार द्वारा प्रेषित की गई है उसके संबंध में वह इस मामले में सरकार किसी प्रकार का निदेश जारी करने की स्थिति में नहीं है।[127]

स्वास्थ्य मंत्री द्वारा श्री जयप्रकाश नारायण के उपचार से संबंधित प्रतिवेदन को सभा पटल पर नहीं रखा गया था, यद्यपि इसे सभा पटल पर रखने के लिए कार्यावलि में दर्ज किया गया था। मंत्री ने उक्त प्रतिवेदन को सभा पटल पर न रखे जाने के कारणों को स्पष्ट करने के लिए सदन के समक्ष एक वक्तव्य दिया था।[128]

रेल तथा परिवहन उप मंत्री ने दिल्ली सड़क परिवहन प्राधिकरण अधिनियम, 1950, जिसे औपचारिक रूप से लागू नहीं किया गया था, के अधीन एक अधिसूचना की एक प्रति सभा पटल पर रखने की अनुमति चाही थी। एक सदस्य द्वारा औचित्य-प्रश्न उठाये जाने से पूर्व सभा के नेता ने स्वत: यह बात उठाई कि सदन द्वारा पिछले दिन सदन द्वारा लिए गए इस निर्णय को ध्यान में रखते हुए कि इस अधिनियम के अधीन की गई कार्यवाही की वैधता के लिए एक नया विधान बनाया जाना आवश्यक है, अधिसूचना को सभा पटल पर नहीं रखा जा सकता। इसीलिए, अधिसूचना को सभा पटल पर नहीं रखा गया।[129]

पूर्वी पाकिस्तान से अल्पसंख्यकों के निष्क्रमण किए जाने संबंधी एक तारांकित प्रश्न के अनुपूरक प्रश्नों का जवाब देते समय संबंधित मंत्री ने कहा था कि सरकार द्वारा नियुक्त की गई समिति का प्रतिवेदन प्राप्त हो जाने के पश्चात् इस बात पर विचार किया जायेगा कि उस प्रतिवेदन को सभा पटल पर रखा जा सकेगा या नहीं। एक सदस्य ने यह तर्क दिया कि प्रश्न को सभा पटल पर रखा जाना चाहिए या नहीं, इस बात को सरकार की स्वेच्छा पर नहीं छोड़ा जाना चाहिए किंतु इसका विनिर्णय तो सभापति द्वारा ही किया जाएगा। सभा के नेता (श्री एम॰ सी॰ छागला) ने स्पष्ट किया कि संविधान में यह स्थिति है कि यदि संसद् किसी समिति को नियुक्त करती है कि उसका प्रतिवेदन सभा पटल पर रखा जाना चाहिए; किंतु यदि सरकार किसी समिति को नियुक्त करती है तो सरकार के लिए उस समिति के प्रतिवेदन को सभा पटल पर रखना अनिवार्य नहीं है। प्रतिवेदन की प्राप्ति के पश्चात् सरकार उसका अध्ययन करेगी कि क्या उसमें ऐसा कुछ है जिससे देश की सुरक्षा अथवा इसके अंतर्राष्ट्रीय संबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है और फिर यह विनिर्णय करेगी कि क्या उस प्रतिवेदन को सभा पटल पर रखा जा सकता है या नहीं। सभापति ने सभा के नेता की राय पर अपनी सहमति व्यक्त की।[130]

जब महाराष्ट्र-मैसूर-केरल सीमा विवाद संबंधी आयोग के प्रतिवेदन को सभा पटल पर रखा जा रहा था तब कई मुद्दे उठाए गए थे कि प्रतिवेदन को सभा पटल पर नहीं रखा जा सकता क्योंकि यह प्रतिवेदन न तो सदन के किसी विनिर्णय के अनुसरण में है और न ही सदन द्वारा नियुक्त किसी समिति के परिणामस्वरूप प्रस्तुत किया जा रहा है। यह तर्क दिया गया कि यह प्रतिवेदन असंबद्ध दस्तावेज़ है। एक अन्य तर्क यह दिया गया था कि वह प्रतिवेदन काल-बाधित प्रतिवेदन था और उसे सभा पटल पर नहीं रखा जाना चाहिए। उपसभापति ने नियम 249 तथा 250 का उल्लेख किया जिनको उस सदस्य ने अपने पहले तर्क के समर्थन में उद्धृत किया था और यह कहा था; नियम 250 उन सभी दस्तावेज़ों से संबंधित है जो किसी भी नियम या प्रक्रिया अथवा पूर्वोदाहरण के अधीन सभा पटल पर रखे गए हों। सभी दस्तावेज़, सभा पटल पर एक बार रख दिए जाने के पश्चात् सार्वजनिक दस्तावेज़ बन जाते हैं। तत्पश्चात् वे सदस्यों के लिए उपलब्ध होते हैं, उन्हें समाचार पत्रों में प्रकाशित किया जा सकता है और जनता द्वारा उसका मनचाहे रूप में उपयोग किया जा सकता है। सदन में यह

सामान्य प्रथा रही है कि दस्तावेज़ों अथवा प्रतिवेदनों को सामान्यत: मंत्रियों द्वारा सभा पटल पर रखा जाता है। प्रथा यह रही है कि यदि सरकार किसी दस्तावेज़ को सभा पटल पर रखना चाहती है तो सभापति की अनुमति से वह ऐसा कर सकती है और ऐसा वह करती रही है। जहां तक समय-सीमा का संबंध है, सभा पटल पर दस्तावेज़ों के रखे जाने के लिए किसी प्रकार की कोई समय-सीमा विहित नहीं की गई है। अत: प्रतिवेदन काल-बाधित नहीं हुआ है।[131]

महासचिव द्वारा सभा पटल पर पत्रों का रखा जाना

एक पूर्ववर्ती अध्याय में पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि महासचिव भी समय-समय पर कुछ पत्र सभा पटल पर रखता है जैसे राष्ट्रपति का अभिभाषण, राष्ट्रपति द्वारा सहमति प्राप्त विधेयक, इत्यादि।[132]

एक अवसर पर सभापति ने निम्नलिखित घोषणा की थी:

मुझे प्रधान मंत्री के भूतपूर्व विशेष सहायक श्री एम॰ ओ॰ मथाई के विरुद्ध लगाए गए कतिपय आरोपों के संबंध में प्रधान मंत्री से एक पत्र और एक टिप्पण प्राप्त हुआ है। कैबिनेट सचिव के प्रतिवेदन पर वित्त मंत्री और नियंत्रक और महालेखा परीक्षक की टिप्पणियां भी मेरे पास भेजी गई थीं। मैं सचिव से इन दस्तावेजों की एक-एक प्रति सभा पटल पर रखने के लिए कह रहा हूं।

तत्पश्चात् सचिव ने निम्नलिखित पत्र सभा पटल पर रखे:

(1) प्रधान मंत्री के पूर्व विशेष सहायक श्री एम॰ ओ॰ मथाई के विरुद्ध लगाए गए कतिपय आरोपों के संबंध में प्रधान मंत्री द्वारा सभापति को भेजा गया दिनांक 6 मई, 1959 का पत्र।

(2) उन आरोपों के संबंध में प्रधान मंत्री का टिप्पण।

(3) आरोपों के संबंध में कैबिनेट सचिव के प्रतिवेदन पर वित्त मंत्री और नियंत्रक और महालेखा परीक्षक की टिप्पणियां।

सभापति ने घोषणा की कि ये पत्र उस दिन सदन के मध्याह्न भोजन के लिए स्थगित होने से पूर्व सदस्यों में परिचालित किए जाएंगे।[133]

सभा पटल पर रखे जाने वाले पत्रों का प्रमाणीकरण

सभा पटल पर रखा जाने वाला पत्र या दस्तावेज संबंधित मंत्री या सदस्य द्वारा यथाविधि प्रमाणित किया जाता है। यह प्रमाणीकरण मंत्रियों को जारी स्थायी अनुदेशों के अनुसार पत्र के पहले पृष्ठ पर किया जाता है। मंत्री द्वारा रखे जाने वाले पत्र या दस्तावेज के संबंध में कार्यावलि में प्रविष्टि दर्ज की जाती है। गैर-सरकारी सदस्य को कोई पत्र सभा पटल पर रखने का अधिकार नहीं होता है, जब तक कि सभापति द्वारा उन्हें वैसा करने की अनुमति न दी गई हो। किसी सदस्य द्वारा प्रमाणीकरण की आवश्यकता केवल तब ही होती है जब उसे पत्र सभा पटल पर रखने की अनुमति दी गई हो।

दिन विशेष को सभा पटल पर रखे जाने वाले सभी पत्रों अथवा दस्तावेजों की प्रमाणित प्रतियां सभा की बैठक शुरू होने से पूर्व सभा पटल पर रख दी जाती हैं और बाद में उन्हें संसद् के ग्रंथालय में भेज दिया जाता है।

सभा पटल पर पत्र रखने की प्रक्रिया

मंत्रियों द्वारा सभा पटल पर रखे जाने वाले पत्रों के अंग्रेजी और हिन्दी दोनों रूपान्तरण होना आवश्यक है। जहां सभापति ने पत्र का केवल एक ही रूपांतर रखने की अनुमति दी हो, मंत्री को उसका दूसरा रूपांतर उसके साथ ही में न रखने के कारणों को दर्शाने वाला विवरण भी सभा पटल पर रखना पड़ता है।

जब कोई मंत्री किसी पत्र या दस्तावेज को सभा पटल पर रखना चाहता है तो संबंधित मंत्रालय उस पत्र की मंत्री द्वारा यथाविधि प्रमाणित अंग्रेजी और हिन्दी की एक-एक प्रति सहित सभी तरह से परिपूर्ण उसी पत्र की हिन्दी और अंग्रेजी की प्रतियां, जिस दिन उस पत्र को मंत्री द्वारा सभा पटल पर रखे जाने का प्रस्ताव होता है, उससे कम से कम दो दिन पहले सचिवालय को भेज देता है। विशेष परिस्थितियों में, सभापति, अनुरोध किए जाने पर, मंत्री को अल्पावधि सूचना के आधार पर पत्र सभा पटल पर रखने की अनुमति दे सकता है। यदि वह मंत्री, जिसके नाम पर कार्यावलि में मद दर्ज है, उपस्थित नहीं हो, तो सभापति को पूर्व सूचना देकर मद में दर्ज वह पत्र अन्य मंत्री द्वारा सभा पटल पर रखा जा सकता है।

सभा पटल पर रखे जाने वाले पत्र को सचिवालय के पास भेजते समय संबंधित मंत्रालय को यह उल्लेख करना आवश्यक होता है कि पत्र किस संविधि के अंतर्गत रखा जाने वाला है और उसे किस तारीख को रखे जाने का प्रस्ताव है। मंत्रालयों से प्राप्त होने के बाद पत्रों की सचिवालय में इस बात की जांच की जाती है कि वे उन सांविधिक आवश्यकताओं, यदि कोई हों, के अनुरूप हैं या नहीं। यदि यह पाया जाता है कि पत्र को सभा पटल पर रखने में विलंब हुआ है, तो संबंधित मंत्री को उस पत्र के साथ, पत्र को सभा पटल पर रखने में हुए विलंब के कारणों को दर्शाने वाला विवरण, अंग्रेजी और हिन्दी, दोनों में सभा पटल पर रखना अपेक्षित होता है। यह विवरण भी संबंधित मंत्री द्वारा यथाविधि प्रमाणित होना आवश्यक होता है।

यदि मंत्री ने उस तारीख विशेष, जिस दिन वह पत्र सभा पटल पर रखना चाहता है, का उल्लेख किया होता है तो उस तारीख की कार्यावलि में उसकी प्रविष्टि कर ली जाती है। यदि किसी तारीख का उल्लेख नहीं किया गया हो, तो सामान्यत: उसकी प्रविष्टि, सदन में उस मंत्री द्वारा प्रश्नों के उत्तर देने के लिए आवंटित आगामी दिन की कार्यावलि में की जाती है। वह प्रविष्टि उस मंत्री के नाम में जाती है जिसने उस पत्र को प्रमाणित किया हो। पत्र पर क्रम संख्या अंकित कर दी जाती है और या उसे शीर्षक दे दिया जाता है और कार्यावलि में उसी का या संक्षेप में विषय का उल्लेख किया जाता है।

सभा पटल पर किसी पत्र के रखे जाने का अर्थ यह नहीं होता कि मंत्री महोदय को सभा पटल पर सूचीबद्ध पत्र वास्तव में रखना ही है अथवा उसे अपने हाथों से वहां धरना ही है। इस बारे में प्रक्रिया तो यह है कि उचित प्रकार से अधिप्रमाणित किया गया पत्र पहले से ही सचिवालय में जमा करा दिया जाता है; यह पत्र सभा-पटल पर तभी उपलब्ध कराया जाता है जब मंत्री महोदय औपचारिक रूप से इस बारे में उल्लेख करते हैं कि मैं कार्यावलि में यथा-इंगित पत्र सभा पटल पर रखता हूं और कि, तो मंत्री महोदय द्वारा सभा-पटल पर औपचारिक रूप से पत्र रखे जाने के पश्चात् सदस्यों द्वारा अनुरोध किये जाने पर ही इस प्रकार के पत्र को संदर्भ अथवा अध्ययन के लिए उपलब्ध कराया जाता है।

> एक गैर-सरकारी संकल्प पर अपना भाषण समाप्त करने के पश्चात् कोई सदस्य सभा के पटल तक चला गया और सभा पटल पर कोई दस्तावेज रखने की चेष्टा की। जब किसी अन्य सदस्य ने सभापीठ से यह पूछा कि क्या सभा पटल पर कोई पत्र रखा जा रहा है, तो उपाध्यक्ष ने टिप्पणी की: ''यहां पर अपने हाथों से दिया गया कोई पत्र स्वत: सभा पटल पर रखा गया पत्र नहीं हो जाता।''[134]

> ऐसे ही एक अन्य अवसर पर किसी सदस्य ने सभा पटल पर समाचार-पत्रों संबंधी कुछ सामग्री रखनी चाही जिससे कि वे अभिलेख का भाग बनें। जब उपसभापति ने उस सदस्य से यह टिप्पणी करते हुए उन्हें वापस ले लेने को कहा: ''यदि मैं इसी तरह से पत्र लेता रहूं तो इसके लिए एक पृथक् भंडार गृह की आवश्यकता पड़ेगी। सभा पटल पर पत्रों को रखने का यह कोई तरीका नहीं है।''[135]

वक्तव्य देने के बाद पत्र का रखा जाना

दूसरी पंचवर्षीय योजना के संबंध में योजना आयोग के प्रतिवेदन को प्रस्तुत करते समय प्रधान मंत्री, श्री जवाहरलाल नेहरू ने लंबा भाषण दिया। भाषण के अंत में, सभापति ने टिप्पणी की कि इस प्रतिवेदन को प्रस्तुत करने के लिए प्रधान मंत्री को इतना लंबा-चौड़ा भाषण देने की आवश्यकता नहीं थी। किंतु, फिर भी ऐसा करके उन्होंने सभा का सम्मान ही किया है और इसे लाभान्वित किया है।[136]

इसी प्रकार से प्रधान मंत्री, श्री जवाहरलाल नेहरू ने 'नेताजी जांच समिति' के प्रतिवेदन के संबंध में एक वक्तव्य दिया था तथा इसके पश्चात्, सभा पटल पर प्रतिवेदन की एक प्रति रखी।[137]

रखे जा रहे पत्र की संवैधानिकता

सभापीठ सभा पटल पर रखे जा रहे किसी पत्र की संवैधानिकता के संबंध में कोई उद्घोषणा नहीं करता।

जब वित्त मंत्रालय में राज्य मंत्री संघ राज्य क्षेत्र पांडिचेरी की संचित निधि में से कतिपय व्यय को प्राधिकृत करने से संबंधित राष्ट्रपति के आदेश को अन्तर्विष्ट करने वाली मंत्रालय की अधिसूचना की एक प्रति सभा के पटल पर रखने ही वाले थे, तभी एक सदस्य ने प्रतिवाद कर दिया कि ऐसा करना असंवैधानिक है। तब सभापति ने यह व्यवस्था दी:

''सभापीठ विभिन्न प्रलेखों की संवैधानिक विधिमान्यता के संबंध में कोई उद्घोषणा नहीं करता। इतना ही नहीं, इस मामले में, इस प्रलेख की संवैधानिक विधिमान्यता **न्याय निर्णयाधीन** है। सभा पटल पर किसी प्रलेख के रखे जाने का तात्पर्य केवल यह है कि उसकी विषय-वस्तु के बारे में सदस्यों को सूचना प्रदान की जा रही है। इसके अलावा, विधेयक में इस प्रलेख का हवाला भी दे दिया गया है और यह एक ऐसा मामला होगा जिसे वाद-विवाद में भी उल्लिखित किया जा सकता है। इस दस्तावेज को लोक सभा में पहले ही रखा जा चुका है और अब यह एक सरकारी दस्तावेज बन चुका है। मेरी धारणा यह है कि यह प्रलेख इस सभा के पटल पर भी रखा जायेगा।''[138]

सभा पटल पर रखे गए पत्रों संबंधी समिति को सभा पटल पर रखे गए पत्रों की नियमानुसार जांच करने का कार्य सौंपा जाता है। अधीनस्थ विधान संबंधी समिति 'आदेशों' (अर्थात् नियम, विनियम, आदि) के विभिन्न पक्षों की नियमानुसार संवीक्षा करती है।

रखे गए पत्रों को सरकारी माना जाना

सभा पटल पर रखे गए सभी पत्रों को सरकारी माना जाता है[139] और वे सभा के स्थाई अभिलेख बन जाते हैं। पत्रों को संसद् ग्रंथागार में रखा जाता है तथा इनका उल्लेख सभा की मुद्रित कार्यवाही में किये जाने के साथ-साथ इन पर ग्रन्थागार सूचकांक डाला जाता है।

सभा पटल पर रखे गए पत्र का परिचालन

सभा पटल पर रखे गए पत्रों की प्रतियां सदस्यों को परिचालित की जाती हैं, यदि मंत्री ऐसा चाहें अथवा सदन में इस प्रकार की सामान्य मांग की जाये। जिन पत्रों पर सभा में चर्चा की जाती है जैसे बजट प्रलेख, संघ लोक सेवा आयोग, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के प्रतिवेदन, अ॰जा॰/अ॰ज॰जा॰ आयुक्त आदि निरपवाद रूप से सदस्यों को परिचालित किये जाते हैं।

एक अवसर पर, प्रधान मंत्री, श्री जवाहरलाल नेहरू ने स्पष्ट किया था कि सरकार द्वारा जीवन बीमा निगम के मामलों की जांच से संबंधित पत्रों को सभा पटल पर तत्काल रखना संभव नहीं था लेकिन फिर भी सरकार उनके प्रकाशन को अगले सत्र तक विलंबित रखना नहीं चाहती थी। अत: उन्होंने सभापति से परामर्श लिया था

कि क्या सरकार के लिए अगले सत्र की प्रतीक्षा करने के स्थान पर पत्रों को सदस्यों के पास भेजना और फिर उन्हें सभा पटल पर रखना संभव होगा। कुछ चर्चा के बाद सभापति ने यह टिप्पणी की थी: ''हमारा निष्कर्ष यह है कि सरकार द्वारा इस मामले पर विचार करने और उसके द्वारा कतिपय निर्णयों पर पहुंचने के बाद संघ लोक सेवा आयोग के प्रतिवेदन और सरकार के निर्णयों को हमारे सचिव के पास भेजा जाएगा जो उन्हें सदस्यों को वितरित करेंगे।''[140]

पत्र को सभा पटल पर पुन: रखना

जब संविधान अथवा किसी कानून में यह उपबंध हो कि उनके अधीन जारी किए 'आदेशों' को एक विशेष अवधि में सभा पटल पर रखा जाना चाहिए तो इस कार्य को एक सत्र में पूरा किया जाना अपेक्षित होता है और यदि यह इस तरह पूरा नहीं किया जाता तो 'आदेश' को आगामी सत्र अथवा सत्रों में सभा पटल पर पुन: रखना अपेक्षित होता है जब तक कि उक्त अवधि एक सत्र में पूरी न हो जाए। जब 'आदेशों' को अलग-अलग तारीखों पर दोनों सदनों के सभा पटल पर रखा जाता है तो उनको सभा पटल पर रखे जाने के लिए अपेक्षित अवधि बाद की तारीख से शुरू होती है।

जब किसी कानून में यह उपबंध किया गया हो कि उसके अधीन तैयार किए गए 'आदेशों' को एक निश्चित अवधि में सभा पटल पर रखा जाना चाहिए जोकि एक अथवा दो अथवा ज्यादा सत्रों को मिलाकर हो सकती है, तो 'आदेशों' को प्रारंभ में एक सत्र में रखे जाने के बाद उन्हें आगामी सत्रों में रखा गया माना जाता है जब तक कि वह निर्धारित अवधि पूरी होती है और इस प्रकार ऐसा 'आदेश' सभा पटल पर रखे जाने की निर्धारित अवधि के पूरा होने के समय में आगामी सत्रों में सभा पटल पर औपचारिक रूप से पुन: नहीं रखा जाता है।

एक सत्र के दौरान सभा पटल पर रखे गए कानूनी आदेशों की सूची

सचिवालय प्रत्येक सत्र की समाप्ति के बाद सदस्यों की जानकारी के लिए उस सत्र के दौरान राज्य सभा के पटल पर रखे गए, विधान की प्रत्यायोजित शक्तियों के अधीन बनाए गए कानूनी नियमों और आदेशों की सूची के साथ-साथ कानूनों के उन संगत उपबंधों, जिनके अधीन उन्हें सभा पटल पर रखा जाता है तथा सभा पटल पर रखे जाने की अवधि और उस अवधि जिसके भीतर उन नियमों और आदेशों में संशोधन किया जा सकता है, को भी प्रकाशित करता है।[141]

संवेदनशील अधिसूचनाओं को सभा पटल पर रखा जाना

संवेदनशील अधिसूचनाएं वे अधिसूचनाएं हैं जो प्रतिवर्ष पचास लाख रुपये से अधिक राजस्व वाले निर्यात-शुल्कों, आयात-शुल्कों अथवा उत्पाद-शुल्कों में परिवर्तन करती है। इनमें उन मामलों को छोड़ दिया जाता है जहां मौजूदा रियायत दी जा रही है।[142] इन अधिसूचनाओं को लोक सभा की अधीनस्थ विधान संबंधी समिति की सिफारिशों के अनुसार समय पर सभा पटल पर रखा जाना अपेक्षित होता है।[143] ऐसी अधिसूचनाओं को सभा पटल पर रखने के लिए अनुपूरक कार्य सूची उस दिन सभा के उठने से पूर्व जारी की जाती है ताकि सदस्य अधिसूचनाओं की अन्तर्वस्तु को पहले ही जान सकें।[144]

संसदीय शिष्टमंडल के प्रतिवेदन को सभा पटल पर रखा जाना

सभापति और अध्यक्ष ने निम्नलिखित कार्य के लिए 12 अगस्त, 1960 से दस दिन की अवधि के लिए

असम राज्य का दौरा करने के लिए नौ सदस्यों वाले एक शिष्टमंडल की नियुक्ति की थी:

(1) वहां स्थिति का मूल्यांकन करना;

(2) सुधार के लिए उपाय सुझाना; और

(3) वहां ऐसी घटनाओं की पुनरावृत्ति को रोकने के लिए उपाय सुझाना।

शिष्टमंडल से दोनों सभाओं के पीठासीन अधिकारियों को प्रतिवेदन प्रस्तुत करने को कहा गया था।[145] समिति के एक सदस्य द्वारा सभापति को प्रतिवेदन भेजा गया था जिन्होंने सदस्यों से सभा के समक्ष प्रतिवेदन रखने को कहा था। तद्नुसार, समिति के सदस्यों के पत्रों के साथ प्रतिवेदन को सभा पटल पर रखा गया था।[146]

पत्रों की अभिरक्षा

सदन अथवा सदन की किसी समिति या सचिवालय के सभी अभिलेखों, दस्तावेज़ों और पत्रों की अभिरक्षा महासचिव में निहित होती है। जब कोई दस्तावेज़ सदन में प्रस्तुत किया जाता है या सदन की किसी समिति या सचिवालय को भेजा जाता है तब वह सदन के अभिलेखों का अंग बन जाता है। यदि महासचिव की अभिरक्षाधीन किसी ऐसे दस्तावेज़ को, जो सदन अथवा उसकी किसी समिति की कार्यवाही या अन्यथा से संबंधित हो, किसी न्यायालय में प्रस्तुत किए जाने की आवश्यकता हो तो उसे निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार सदन की अनुमति से ही प्रस्तुत किया जा सकता है जैसाकि विशेषाधिकार से संबंधित अध्याय 8 में उल्लेख किया गया है।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 78 (2) के अधीन, सदन की कार्यवाही को, प्राधिकृत संसदीय प्रकाशन को प्रस्तुत करके ही प्रमाणित किया जा सकता है। इसलिए राज्य सभा को कठिनाई केवल तभी होती है जब राज्य सभा की कार्यवाही के अप्रकाशित दस्तावेज़ों को न्यायालय में साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किए जाने की आवश्यकता हो। अधिकांशत: अन्य मामलों में सामान्य रूप से प्रथमत: दस्तावेज़ों की केवल प्रमाणित प्रति ही मांगी जाती है।

अधिशासी प्राधिकारियों अर्थात् पुलिस को जब किसी संसद्-सदस्य से संबंधित कोई ऐसी जानकारी प्राप्त करने की आवश्यकता होती है जिसके अभिलेख महासचिव के कब्जे में रहते हैं अथवा उक्त प्राधिकारी प्रपत्रों की जांच करना चाहें या उसकी प्रतिलिपियां लेना चाहें जो इसकी अनुमति है लेकिन उन्हें सभापति की पूर्वानुमति के बिना न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया जाएगा।

> राज्य सभा के एक सदस्य द्वारा की गई शिकायत के आधार पर पंजीकृत मामले के संबंध में जांच किए जाने हेतु महासचिव के कब्जे में रहने वाले अभिलेख से कतिपय प्रपत्रों को देखने के लिए नई दिल्ली के सहायक पुलिस उपायुक्त से एक अनुरोध प्राप्त हुआ। सभापति ने इस संबंध में विशेषाधिकार समिति द्वारा जांच कराई तथा सभा को सूचित किया कि समिति ने महसूस किया कि सभापति पुलिस प्राधिकारियों को प्रपत्रों की जांच करने तथा प्रपत्रों की प्रतिलिपियां (फोटो प्रति सहित) तैयार करने की अनुमति दे सकते हैं तथा समिति का मत था कि उक्त प्रपत्र अथवा उनकी प्रतिलिपियों को सभापति से इस आशय की पूर्वानुमति लिए बिना न्यायालय में प्रयोग या प्रस्तुत नहीं किया जाना चाहिए। तद्नुसार, सभापति ने पुलिस प्राधिकारियों को इस चेतावनी सहित अनुमति दे दी कि उनकी पूर्वानुमति ली जानी चाहिए।[147]

गैर-सरकारी सदस्य द्वारा पत्रों को सभा पटल पर रखा जाना

राज्य सभा की प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन विषयक नियमों में ऐसा कोई उपबंध नहीं है जो गैर-सरकारी सदस्य को सभा पटल पर पत्र रखने का अधिकार प्रदान करता है। यदि किसी मामले में विशेष परिस्थितियों

में कोई गैर-सरकारी सदस्य किसी पत्र को सभा पटल पर रखना चाहता है तो उसे सभापति को इस बारे में पहले से सूचना देनी चाहिए जिससे कि वह उस पत्र को देख सके तथा तब इस बारे में निर्णय कर सके कि उसे सदस्य के पत्र को सभा पटल पर रखने की अनुमति प्रदान करनी चाहिए अथवा नहीं। पत्र सभा पटल पर तब ही रखा जा सकता है जब सभापति द्वारा अनुमति प्रदान कर दी गई हो[148] तथा वह सदस्य द्वारा अधिप्रमाणित हो।[149]

बिड़ला उद्योग को लाइसेंस से संबंधित एक ध्यानाकर्षण प्रस्ताव पर चर्चा के दौरान एक सदस्य ने औद्योगिक लाइसेंस के संबंध में डा॰ हज़ारी के प्रतिवेदन के अंश पढ़ने शुरू कर दिये। एक अन्य सदस्य ने मांग की कि उक्त सदस्य जिस प्रतिवेदन में से उद्धरण दे रहे हैं उसकी एक अधिप्रमाणित प्रति सभा पटल पर रखने के लिए उनसे कहा जाए। एक मंत्री ने कहा कि प्रतिवेदन सरकार को प्रस्तुत किए जाने पर संबंधित मंत्री ही वह व्यक्ति हो सकता है जो इस बात का निर्णय करेगा कि उक्त प्रतिवेदन जनहित में सभा पटल पर रखा जाना चाहिए अथवा नहीं। तत्पश्चात्, संबंधित मंत्री ने कहा कि वह प्रतिवेदन की एक प्रति अगले दिन सभा पटल पर रख देंगे। सभापति ने विचार व्यक्त किया:

> जहां तक नियम 249 का संबंध है वह केवल मंत्री से संबंधित है। यदि मंत्री किसी प्रपत्र से उद्धरण देता है तो उन्हें उसे सभा पटल पर रखने के लिए बाध्य किया जा सकता है। गैर-सरकारी सदस्यों के मामले में ऐसा कोई नियम नहीं है। इसे पूर्णत: मेरे स्वविवेक पर छोड़ दिया गया है। कई बार ऐसी स्थितियां आ जाती हैं जिनमें स्वविवेक का प्रयोग करना बहुत हानिकारक हो सकता है और इसका दुरुपयोग किया जा सकता है। अत: मैं एक दृष्टांत पैदा नहीं करना चाहूंगा, खासतौर पर इसलिए कि मंत्री महोदय ने स्वयं यह कहा है कि वह इसे सभा पटल पर रख देंगे।[150]

जब एक सदस्य ने उस पत्र की एक फोटो प्रति, जोकि उसे प्राप्त हुआ था, सभा पटल पर रखने का आग्रह किया तो उपसभापति ने टिप्पणी करते हुए कहा था:

> कोई सदस्य किसी दस्तावेज का उल्लेख कर सकता है, वह उसे पढ़कर सुना सकता है अथवा उसका सारांश प्रस्तुत कर सकता है, इसकी अनुमति है, लेकिन सभा पटल पर रखने की अनुमति नहीं है। यह पीठासीन अधिकारी के विवेकाधीन है। मैं इसे सभा पटल पर रखे जाने की अनुमति नहीं दूंगा।[151]

ऐसे कई अवसर हुए हैं जब गैर-सरकारी सदस्यों को पत्र और दस्तावेज़ सभा पटल पर रखने की अनुमति दी गई है। कुछ महत्त्वपूर्ण अवसरों का यहां उल्लेख किया जाता है।

एक सदस्य ने सरकारी क्षेत्र के एक उपक्रम में हड़ताल के संबंध में उसे प्राप्त हुए तार का उल्लेख किया। सभा के नेता द्वारा उत्तर दिये जाने के बाद सदस्य ने तार को सभा पटल पर रखने हेतु सभापति से अनुमति मांगी, जो दे दी गई थी।[152]

जब एक सदस्य ने अपने संकल्प के समर्थन में कुछ ऐसे पत्रों की विषय वस्तु का उल्लेख किया जोकि कतिपय व्यक्तियों द्वारा सरकार को भेजे गये थे तो उपसभापति ने यह व्यवस्था दी कि यद्यपि सदस्य ने पत्र पढ़ कर नहीं सुनाए हैं, तथापि इस तथ्य के दृष्टिगत रखते हुए कि उन्होंने सभा में उनका उल्लेख किया है, और यह आरोप लगाया है कि सरकार ने उनका उत्तर नहीं दिया है, इसलिए उन्हें उन पत्रों को सभा पटल पर रखना चाहिए। सदस्य ने कहा कि वह उन्हें सभा पटल पर रख देंगे।[153]

एक सदस्य ने ''देश में मैनेजिंग एजेंसी हाउसिज़ के कुछ प्रतिनिधियों की ओर से कम्पनी विधेयक, 1953 के संबंध में संयुक्त समिति को प्रस्तुत किये गए गोपनीय ज्ञापन'' की एक प्रति सभा पटल पर रखी जिसका उल्लेख सदस्य ने अपने भाषण में किया था।[154]

विपक्ष के नेता (श्री जयपाल रेड्डी) ने विश्व बैंक के अध्यक्ष को भेजे गए वित्त मंत्री के दिनांक 11 नवंबर, 1991 के पत्र, अनुलग्नक सहित की एक प्रति सभा पटल रखी। [उसी दिन मध्याह्न पश्चात् वित्त मंत्री ने भी उक्त पत्र की एक प्रति इसके संलग्नकों सहित, सभा पटल पर रखी।][155]

तद्नन्तर एक अवसर पर, विपक्ष के नेता (श्री जयपाल रेड्डी) को एशिया ब्राउन बॉवेरी (ए॰बी॰बी॰) कंपनी को एक ठेके के दिए जाने के संबंध में निम्नलिखित पत्रों की एक-एक फोटो प्रति सभा पटल पर रखने की अनुमति दी गई जिन्हें सभा पटल पर रखने की अनुमति उन्होंने इस विषय पर चर्चा आरम्भ करते हुए मांगी थी:

(1) निविदा समिति का टिप्पण।

(2) सदस्य (विद्युत), रेलवे बोर्ड का टिप्पण।

(3) डी॰ ई॰ ए॰ का दिनांक 7 फरवरी, 1992 का टिप्पण।

(4) 10 फरवरी, 1992 को हुई अंतर-मंत्रालयीय बैठक का कार्यवृत्त।

(5) दिनांक 30 अक्तूबर, 1992 का ज्ञापन संख्या 87/एफ (एफ॰ई॰एक्स॰)/115/1/ए॰डी॰बी॰

(6) प्रौद्योगिकी अंतरण सहित 6000 हॉर्स पावर 3-फेज ए॰सी॰ विद्युत चालित रेल इंजनों को प्राप्त करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय निविदा जी-140/आर (कॉमर्शियल रीबिड्स) के संबंध में निविदा समिति की सिफारिशें।[156]

एक सदस्य ने पांचवीं पंचवर्षीय योजना के प्रारूप संबंधी कतिपय पत्रों को सभा पटल पर रखना चाहा। अवलोकन के पश्चात् उपसभापति ने विषय से संबंधित निम्नलिखित पत्रों की एक-एक फोटोस्टेट प्रति सभा पटल पर रखे गए पत्रों के रूप में समझे जाने की अनुमति दे दी:

(1) दि वर्ल्ड बैंक/आई॰एफ॰सी॰/एम॰आई॰जी॰ए॰ कार्यालय ज्ञापन, दिनांक 10 जून, 1992 विषय: राजकोषीय समायोजन और आठवीं योजना।

(2) दि वर्ल्ड बैंक/इन्टरनेशनल फाइनेन्स कारपोरेशन कार्यालय ज्ञापन, दिनांक 10 जून, 1992।

(3) आठवीं योजना—शिक्षा क्षेत्र।

(4) उद्योग आठवीं—योजना।[157]

एक सदस्य को 'ए नोट ऑन दि इम्पोर्ट ऑफ शुगर बाई डिपार्टमेंट ऑफ फूड इन 1989' नामक शीर्षक के तहत प्रकाशित एक पत्र की सत्यापित प्रति के रूप में उसके द्वारा अधिप्रमाणित किए हुए कुछ पत्र सभा पटल पर रखने की अनुमति दी गई।[158]

एक सदस्य ने पुरुलिया काण्ड के संबंध में गृह मंत्रालय के संयुक्त सचिव तथा पश्चिमी बंगाल के मुख्य सचिव के बीच हुए पत्राचार की एक-एक प्रति सभा पटल पर रखी।[159]

पत्र को सभा पटल पर रखने की अनुमति न दिया जाना

एक सदस्य ने श्री एम॰ ओ॰ मथाई द्वारा अभिकथित रूप में पश्चिमी बंगाल की राज्यपाल कुमारी पद्मजा नायडू को लिखे गये उस पत्र की एक प्रति सभा पटल पर रखनी चाही, जिसमें बताया गया था कि श्री मथाई ने एक सदस्य द्वारा सभा में श्रीमती इंदिरा गांधी पर लगाये गये आरोप की पुष्टि की थी। सभापति ने इस विषय में संबोधित व्यक्ति तथा संबोधन कर्त्ता से सदस्य द्वारा दिए गये दस्तावेज़ के आधार पर स्वयं जांच पड़ताल की और निम्नलिखित व्यवस्था दी:

> संसद् की सभा एक विशेषाधिकार प्राप्त स्थान होता है क्योंकि संसदीय कार्यवाहियों को संविधान में उन्मुक्ति प्रदान की गई है। मेरी राय में व्यक्तियों के निजी पत्राचार को सभा पटल पर नहीं रखने दिया जा सकता और इस प्रकार उन्हें उन्मुक्ति प्रदान की गई है जिसका लाभ वे अन्यथा नहीं उठा सकते थे। इसलिए मैं उक्त पत्र को सभा पटल पर रखने की इजाजत नहीं दे सकता हूं। संसद्-सदस्यों को सभा में बोलने की स्वतंत्रता है। किन्तु मेरी राय में व्यक्तियों के निजी पत्राचार के आधार पर, जो इस सभा में कोई वक्तव्य देने के अधिकारी नहीं हैं, सदस्यों द्वारा आरोप लगाने के लिए बोलने की स्वतंत्रता का उपयोग करने की प्रथा का उपयोग किया जाना अवांछनीय है।[160]

एक सदस्य ने किसी अन्य सदस्य द्वारा उल्लिखित घटना के संबंध में उनके दल के सचिव द्वारा दिए गए वक्तव्य को सभा पटल पर रखना चाहा। उन्हें इसकी अनुमति नहीं दी गई क्योंकि सदस्य ने इसकी पूर्व सूचना नहीं दी थी और पत्र को सभापति को नहीं दिखाया था और ''ऐसे वक्तव्य को सभा पटल पर रखने देने की अनुमति देना तथा एतद्द्वारा उसे सभा की कार्यवाही का हिस्सा बना देना उचित नहीं होगा।''[161]

दस्तावेज़ की प्रति से उद्धृत करना

एक सदस्य ने, किसी पुलिस अधीक्षक द्वारा एक कम्पनी को भेजे गए पत्र में से पढ़ना आरम्भ कर दिया। उपसभापति के पूछने पर सदस्य ने स्वीकार किया कि वह मूल पत्र नहीं वरन् उसकी साइक्लोस्टाइल प्रति है। उपसभापति ने यह कहते हुए उसे पत्र पढ़ने की इजाजत नहीं दी कि सदस्य उसकी केवल मूल अथवा प्रमाणित प्रति से ही पढ़ सकता है और यदि वह उसे सभा पटल पर रखने के लिए तैयार है, तभी वह उसमें से पढ़ सकता है।[162]

गोपनीय दस्तावेज़ों (केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के प्रतिवेदन) को पटल पर रखा जाना अथवा उसमें से उद्धृत करना

जब कोई सदस्य किसी गोपनीय दस्तावेज़, जिसे जनहित में प्रकट नहीं किया गया है, से कोई अंश उद्धृत करता है और उसे सदन के पटल पर रखना चाहता है तब उसे, ऐसे दस्तावेज अथवा उसकी प्रति सभापति को प्रस्तुत करनी पड़ती है और सभापति महोदय इस मामले में सरकार से परामर्श कर सकते हैं तत्पश्चात् वह निर्णय करते हैं कि उसे पटल पर रखने की अनुमति दी जाये अथवा नहीं। फिर भी सदस्यों से अपेक्षा की जाती है कि जो सामग्री उनके हाथ में आती है, वे उसका उपयोग करने में अपने विवेक का इस्तेमाल करें।[163]

प्रश्नकाल समाप्त होने के बाद एक सदस्य ने दावा किया कि उसके पास उड़ीसा सरकार के दो मुख्य मंत्रियों तथा कुछ अन्य मंत्रियों के खिलाफ कुछ आरोपों के बारे में केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के प्रतिवेदन और उस मंत्रिमंडल उप-समिति के निष्कर्षों की भी एक प्रति है और उसने उन दस्तावेज़ों की प्रति सभा पटल पर रखने के लिए सभापति की अनुमति मांगी। सभापति ने इसकी अनुमति नहीं दी और सदस्य से कहा कि वह दस्तावेज़ उन्हें प्रस्तुत करें ताकि वह उनकी जांच कर निर्णय कर सकें। बाद में जब सदस्य ने केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के प्रतिवेदन में से उद्धृत करने का प्रयास किया तब सभापति ने कहा कि उक्त प्रतिवेदन सरकारी दस्तावेज़ है और उसे सभा पटल पर नहीं रखा गया है। इसलिए माननीय सभापति ने उसमें से उद्धृत करने की अनुमति नहीं दी और सदस्य से फिर कहा कि वह दस्तावेज़ की प्रति उन्हें प्रदान करें ताकि वह सरकार से परामर्श करके उस पर निर्णय कर सकें। सभापति महोदय ने कहा कि एक गैर-सरकारी सदस्य सभापति की अनुमति के बिना कोई पत्र सभा पटल पर नहीं रख सकता है। कुछ दिनों बाद उक्त पत्रों की जांच के बाद सभापति ने निम्नलिखित व्यवस्था दी:

> मैंने श्री लोकनाथ मिश्र द्वारा दिये गए पत्रों को देखा है और इस मामले में सरकार से भी परामर्श किया। सरकार केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की रिपोर्ट तथा मंत्रिमंडल उप-समिति के निष्कर्ष सभा पटल पर नहीं रखना चाहती है क्योंकि उसका विचार है कि ये गुप्त एवं गोपनीय दस्तावेज़ हैं और इस प्रकार ये विशिष्ट प्रकार के हैं। इन परिस्थितियों में, मैं इन दस्तावेज़ों को सभा पटल पर रखने के लिए सरकार पर जोर नहीं डाल पाऊंगा।
>
> अगला प्रश्न यह है कि क्या श्री लोकनाथ मिश्र को, जिनके पास ये दस्तावेज़ हैं और जो इन्हें सी॰ बी॰ आई॰ प्रतिवेदन तथा मंत्रिमंडल उप-समिति की प्रतियां बताते हैं, इन्हें सभा पटल पर रखने की अनुमति दी जा सकती है। मुझे खेद है, मैं उन्हें यह अनुमति नहीं दे सकता। इन दस्तावेज़ों का स्वरूप ही गोपनीय एवं गुप्त प्रकार का है और इसलिए मैं उन्हें सभा पटल पर रखने की अनुमति नहीं दे सकता। इसके अतिरिक्त, जाहिर है श्री लोकनाथ मिश्र उन पत्रों को अधिप्रमाणित नहीं कर सकते हैं; जिन्हें वे पटल पर रखना चाहते हैं।
>
> जहां तक इस बात का संबंध है कि श्री लोकनाथ मिश्र सभा में अपने भाषण के दौरान इस पत्र में उल्लिखित तथ्यों का कहां तक उपयोग कर सकते हैं मैं केवल इतना ही कहूंगा कि इस मामले को स्वयं सदस्य की सद्भावना एवं विवेक पर छोड़ दिया जाना चाहिए।[164]

जब कुछ संसद्-सदस्यों, विधायकों, मंत्रियों आदि के टेलीफोनों को 'टैप' किए जाने के संबंध में एक मामला

उठाया जा रहा था तो टेलीफोनों को टैप किए जाने के संबंध में केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की रिपोर्ट के सभा पटल पर रखे जाने के संबंध में एक मांग की गई थी। प्रधान मंत्री ने अन्य बातों के साथ-साथ कहा कि:

''केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की रिपोर्ट जांच आयोग की रिपोर्ट नहीं है। जांच अभिकरणों की रिपोर्ट सभा पटल पर नहीं रखी जाती। एक ऐसा अवसर है जब गैर-सरकारी सदस्यों ने किसी उद्देश्य से केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो या अन्य अभिकरणों का प्रतिवेदन सभा पटल पर रखा था लेकिन इस संसद् के इतिहास में सरकार ने कभी भी किसी जांच अभिकरण का प्रतिवेदन सभा पटल पर नहीं रखा क्योंकि तब जांच अभिकरण के लिए उपयुक्त रूप से कार्य करना संभव नहीं हो पाएगा। अन्यथा मेरे पास छुपाने के लिए अथवा प्रतिवेदन को इस सदन से दूर रखने के लिए कुछ भी नहीं है। यह देखने के लिए जांच अभिकरण प्रभावी ढंग से कार्य करे मैं यह कहने के लिए बाध्य हूं कि... मैं इसमें हिस्सा नहीं लूंगा... मेरा मार्गदर्शन नियमों, विधियों और परम्पराओं ने किया है।''

जब एक सदस्य ने यह कहा: कि ''यह प्रतिवेदन है जो मैं सभा पटल पर रखना चाहता हूं।'' उपसभापति ने कहा कि ''मेरी अनुमति के बिना इसे सभा पटल पर नहीं रखा जा सकता। उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए। यह उचित नहीं है।''[165]

मंत्री द्वारा वक्तव्य

लोक महत्व के विषयों या विभिन्न मामलों के संबंध में सरकार की नीति के बारे में संसद् को अवगत कराने की दृष्टि से मंत्रीगण, सभापति की सहमति से, समय-समय पर सभा में वक्तव्य देते हैं। नियम के अनुसार, वक्तव्य देते समय कोई प्रश्न नहीं पूछा जा सकता।[166]

दिये जाने वाले वक्तव्य की प्रतियों का परिचालन

परम्परा के अनुसार, दिये जाने वाले वक्तव्य की अंग्रेजी तथा हिन्दी में प्रतियां सदस्यों में, सदन में ही परिचालित करनी होती हैं।

जब एक मंत्री पंजाब की स्थिति के बारे में वक्तव्य देने वाले थे, तो कुछ सदस्यों ने यह शिकायत की कि उन्हें वक्तव्य की प्रतियां नहीं दी गयी हैं। जब मंत्री ने यह कहा कि प्रतियां आ रही हैं, तो सभापति ने यह अधिनिर्णय दिया कि मंत्री द्वारा वक्तव्य शुरू करते समय ही तत्काल वक्तव्य की प्रतियां सदस्यों में परिचालित की जानी चाहिए थीं; अन्यथा सदस्यों के लिए समझ पाना कठिन होगा।[167]

नियम के अनिवार्य उपबंध के होते हुए भी, काफी समय से राज्य सभा में सदस्यों को 'मंत्री द्वारा दिये गये वक्तव्य' पर कुछ स्पष्टीकरण मांगने की अनुमति देने की एक परिपाटी अथवा प्रथा बन गयी है।[168] साधारणतया वक्तव्य देने के तुरन्त बाद स्पष्टीकरण मांगे जाते हैं। तथापि, यदि वक्तव्य लम्बा हो या अत्यंत महत्वपूर्ण विषय के बारे में हो तो स्पष्टीकरण स्थगित किए जा सकते हैं और अगले दिन या बाद के किसी दिन पूछे जा सकते हैं।[169] कभी-कभी स्पष्टीकरणों का सिलसिला अगले दिन तक भी चलता रहता है।[170]

उदाहरण के लिए, शुक्रवार, 22 नवम्बर, 1991 को तीन वक्तव्य दिये गये थे; उनमें से दो पर स्पष्टीकरण सोमवार, 25 नवंबर, 1991 को मांगे गये थे; तीसरे वक्तव्य पर स्पष्टीकरण मंगलवार, 26 नवम्बर, 1991 को मांगे गये।

मंत्री सभी स्पष्टीकरणों का तत्काल या अगले दिन[171] अथवा बाद के किसी दिन[172] उत्तर देते हैं; यह बात सभा की सुविधा या वक्तव्य की विषय वस्तु पर निर्भर करती है।

केवल स्वप्रेरणा से दिये गये वक्तव्य पर स्पष्टीकरण

मंत्री द्वारा दिये गये वक्तव्य पर स्पष्टीकरण मांगने के लिए सदस्यों को अनुमति देने की राज्य सभा में लम्बे समय से चली आ रही प्रथा को देखते हुए, कभी-कभी यह सवाल उठता है कि क्या मंत्री द्वारा दिया गया वक्तव्य स्वप्रेरणा से दिया गया है या किसी मामले पर सदस्यों द्वारा की गयी कुछ टिप्पणियों के

प्रतिक्रिया स्वरूप है। बाद वाले मामले में, सामान्यत:, कोई स्पष्टीकरण मांगने की अनुमति नहीं दी जाती।

> जब प्रधान मंत्री बोफोर्स तोपों की खरीद के संबंध में कुछ सदस्यों द्वारा उठाये गये कतिपय मुद्दों का जवाब दे रहे थे, तो एक सदस्य उस पर एक स्पष्टीकरण मांगना चाहते थे। तब सभापति ने निर्णय दिया था कि यदि प्रधान मंत्री ने स्वप्रेरणा से वक्तव्य दिया है तो सदस्य को स्पष्टीकरण मांगने का हक है। प्रधान मंत्री का वक्तव्य सदस्यों के प्रश्नों की प्रतिक्रिया स्वरूप था। अत: स्पष्टीकरण मांगने की अनुमति नहीं दी गयी।[173]

> सभापति के निर्देशानुसार, वित्त मंत्री ने विश्व बैंक को लिखे अपने पत्र की एक प्रति सभा पटल पर रखी।[174] अगले दिन मांग की गयी कि विश्व बैंक का पूर्ण प्रतिवेदन सभा पटल पर रखा जाये। उस दिन के अंतिम क्षणों में मंत्री, उठाये गये मुद्दों के जवाब में, एक वक्तव्य देना चाहते थे लेकिन जब उस पर कुछ आपत्तियां की गयीं तो मंत्री को उस वक्तव्य को सभा पटल पर रखने की अनुमति दी गयी।[175] इसलिए सदस्य वक्तव्य पर स्पष्टीकरण नहीं मांग सके। अगले दिन इस आशय का प्रक्रियात्मक विवाद उठा कि क्या सभा पटल पर रखा गया वक्तव्य स्वत: प्रेरित वक्तव्य था और सदस्यों को उस पर स्पष्टीकरण मांगने का अधिकार है।[176] उपसभापति ने निर्णय दिया है कि वित्त मंत्री द्वारा सभा पटल पर रखा गया वक्तव्य उस प्रकार का वक्तव्य नहीं था जिस पर स्पष्टीकरणों के मांगने की अनुमति दी जाए।[177]

> तथापि, एक अवसर पर, सभापति के निर्देशानुसार, सभा में कुछ दिन पहले सदस्यों द्वारा नर्मदा सरोवर परियोजना पर किए गए विशेष उल्लेखों की प्रतिक्रिया में इस विषय पर जब सम्बद्ध मंत्री अपना वक्तव्य देने आये तो उपसभापति ने स्पष्ट किया कि यह वक्तव्य सदस्यों द्वारा उठाये गये मुद्दों को स्पष्ट करने के लिए दिया जाने वाला और आगे कोई और स्पष्टीकरण न मांगे जाएं। लेकिन सदस्य इस बात से सहमत नहीं हुए। आखिरकार, वक्तव्य को चार घंटे से अधिक समय तक इस निदेश के साथ स्थगित किया गया कि वक्तव्य की अंग्रेजी तथा हिन्दी की प्रतियां सदस्यों में परिचालन के लिए तैयार की जानी चाहिए। तत्पश्चात् वक्तव्य दिया गया और उस पर स्पष्टीकरण मांगने की अनुमति दी गई।[178]

तथापि, यदि वक्तव्य नहीं दिया जाता है, लेकिन मंत्री को वक्तव्य को सभा पटल पर रखने की अनुमति दी जाती है तो उस पर सभापीठ द्वारा निर्धारित समय पर स्पष्टीकरण मांगने की अनुमति दी जा सकती है।[179]

> भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली के एक वैज्ञानिक द्वारा आत्महत्या के संबंध में 9 मई, 1972 को सभा पटल पर एक वक्तव्य रखा गया था। सदस्यों ने अगले दिन स्पष्टीकरण मांगे। मुद्दों को स्पष्ट करने वाला एक और वक्तव्य 16 मई, 1972 को सभा पटल पर रखा गया। 18 मई 1972 को उस विषय के संबंध में एक अल्पकालिक चर्चा हुई।

अत: स्पष्टीकरण मांगने की प्रथा सभा की प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग बन गयी है। सभा इस अधिकार का प्रयोग उस समय नहीं भी कर सकती जब वक्तव्य की विषय-वस्तु पर चर्चा के लिए अन्यथा अवसर उपलब्ध कराया गया हो।[180] अथवा समय के अभाव में वक्तव्य को स्पष्टीकरण के बगैर छोड़ दिया जाए।

> प्रधान मंत्री ने जवाहर रोजगार योजना पर एक वक्तव्य दिया। उस पर इस आश्वासन के साथ कोई स्पष्टीकरण नहीं मांगा गया कि सभा वक्तव्य और योजना पर चर्चा करेगी,[181] जो 12 मई, 1989 को की गयी।

इस प्रथा का लाभ यह है कि यह सदस्यों को लोक महत्व के विषय पर चर्चा करने का एक अतिरिक्त साधन प्रदान करती है। इससे सदस्यों को कुछ और जानकारी प्राप्त करने या सरकार की विचारधारा के संबंध में संकेत प्राप्त करने में सहायता मिलती है। तथापि, कभी-कभी प्रथा या प्रक्रिया से भी सभापीठ और समस्त सदन, इन दोनों के लिए समस्या उत्पन्न हो जाती है। सभापीठ को समस्या का सामना इसलिए करना पड़ता है, क्योंकि किसी-किसी विशेष अवसर पर अनेक सदस्य स्पष्टीकरण प्राप्त करना चाहते हैं और सभापीठ के लिए यह चयन करना कठिन हो जाता है कि बोलने के इच्छुक इतने अधिक सदस्यों में से किस सदस्य को बुलायें और किसे न बुलायें। सदन के समक्ष समस्या समय के अभाव की रहती है, जैसाकि अन्य देशों की संसदों में भी होता है। यदि वक्तव्य पर स्पष्टीकरण मांगने की प्रक्रिया लंबी हो जाती है या वाद-विवाद के रूप में बदल जाती है तो इसमें काफी समय लग जाता है।

139वें सत्र (1986) के दौरान मंत्रियों द्वारा दिये गये वक्तव्यों पर सदस्यों द्वारा स्पष्टीकरण मांगने में 18 घंटों का समय लग गया; 159वें सत्र (1991) के दौरान 21 घंटे, 155वें सत्र (1990) के दौरान 22 घंटे और 25 मिनट तथा 153वें सत्र (1990) के दौरान 23 घंटे और 19 मिनट का समय सदस्यों द्वारा स्पष्टीकरण मांगने में लग गया। कुछ वक्तव्यों पर तो 3-4 घंटे तक स्पष्टीकरण दिये गये और एक अवसर ऐसा भी आया जब स्पष्टीकरणों के कारण एक ही वक्तव्य पर तीन बैठकों में सात घंटे का समय लग गया (तथापि, वह वक्तव्य अत्यधिक महत्वपूर्ण था, अर्थात् राजीव गांधी हत्याकांड के मामले में एक अभियुक्त के भाग जाने से संबंधित था।)[182]

एक अवसर पर उप-सभापति ने यह टिप्पणी की:

''आजकल, ध्यानाकर्षण प्रस्ताव पर तथा मंत्रियों के वक्तव्यों पर स्पष्टीकरणों के दौरान कही जाने वाली बातों में कोई अंतर नहीं रह गया है। इन दोनों ही अवसरों पर सदस्यगण भाषण देने लग जाते हैं। बस इन दोनों के नाम में ही अंतर रह गया है''।[183]

वक्तव्य पर स्पष्टीकरणों का विनियमन

सभापति द्वारा एक प्रकार की विनियामक पद्धति अपनायी गयी। उन्होंने मंत्री के वक्तव्य पर स्पष्टीकरण के संबंध में निम्नलिखित प्रक्रिया निर्धारित की:

(1) किसी 'वक्तव्य' पर स्पष्टीकरण मांगने हेतु किसी दल/समूह से केवल एक ही सदस्य को बुलाया जाये।

(2) यदि एक से अधिक सदस्य स्पष्टीकरण चाहते हों, तो समय के क्रम के हिसाब से सबसे पहले अनुरोध करने वाले सदस्य का अनुरोध स्वीकार किया जाये और समय के क्रम के अनुसार, बाद में प्राप्त होने वाले उसी दल/समूह के अन्य सदस्यों के अनुरोध की अनदेखी कर दी जाये।

(3) मंत्री द्वारा वक्तव्य दिये जाने से पहले ही सदस्यों द्वारा वक्तव्य पर स्पष्टीकरण मांगने का अनुरोध किया जाना चाहिए। वक्तव्य के बाद प्राप्त हुए अनुरोध पर सामान्यतया विचार नहीं किया जायेगा।[184]

तद्नन्तर कार्य मंत्रणा समिति ने इस मामले पर विचार किया और निम्नलिखित प्रक्रिया की सिफारिश की:

(1) किसी वक्तव्य पर स्पष्टीकरण मांगने के लिए चार या इससे अधिक सदस्यों की संख्या वाले किसी दल/समूह से केवल एक ही सदस्य को बुलाया जाये; और जहां तक कांग्रेस (आई) दल का संबंध है, स्पष्टीकरण मांगने के लिए इस दल के 2-3 सदस्यों को बुलाया जा सकता है।

(2) चार सदस्यों से कम संख्या वाले ग्रुपों के सदस्यों को परस्पर मिलाकर एक संयुक्त ग्रुप बनाकर बारी-बारी से वक्तव्य पर स्पष्टीकरण मांगने का अवसर उन्हें दिया जाए। सदन में किसी एक वक्तव्य के लिए तीन से अधिक सदस्यों को अवसर नहीं दिया जाना चाहिए।

(3) जिन सदस्यों को स्पष्टीकरण मांगने के लिए बुलाया जाता है, उनके नाम सभापीठ को दलों/समूहों के नेताओं/सचेतक (व्हिप) द्वारा दिये जाने चाहिए।

(4) स्पष्टीकरण मांगते समय किसी भी सदस्य को तीन मिनट से अधिक समय नहीं लेना चाहिए।[185]

159वें सत्र के अंतिम तीन दिनों में जब वक्तव्य दिये गये थे, तब समिति की इस सिफारिश को कार्यान्वित किया गया। कुछ सदस्यों ने इस आधार पर नई प्रक्रिया पर आपत्ति की कि इससे स्पष्टीकरण मांगने की उनकी स्वतंत्रता और अधिकार में कमी आयेगी। तथापि, सभा के नेता ने यह टिप्पणी की: ''हम सबके लिए यह समझना आवश्यक है कि हमें कुछ अनुशासन का पालन करना है। कार्य मंत्रणा समिति में सभी राजनीतिक दलों को प्रतिनिधित्व दिया जाता है... हमने यह वायदा किया है।''[186]

वक्तव्यों पर उसी समय तत्काल स्पष्टीकरण मांगने की बजाय सदस्यों के लिए यह विकल्प भी खुला है कि वे समुचित सूचना देकर मंत्री महोदय के वक्तव्य पर चर्चा आरम्भ करा सकते हैं। ऐसे अनेक उदाहरण हमारे सामने विद्यमान हैं, जब सभा में मंत्रियों के कतिपय महत्वपूर्ण वक्तव्यों पर अल्पकालिक चर्चा के रूप में अथवा प्रस्ताव[187] के रूप में भी चर्चा की गई है या फिर ऐसे किसी वक्तव्य पर तत्काल चर्चा भी की जा सकती है।

सदन में 29 जुलाई, 1982 को पिछले दिन कुओ-तेल सौदे के संबंध में दिए गये वक्तव्य, जोकि सार्वजनिक उपक्रमों संबंधी समिति के सैंतालीसवें प्रतिवेदन की विषय-वस्तु थी, पर 6 घंटे की चर्चा हुई; संबंधित मंत्रियों द्वारा दिए गए वक्तव्यों के आधार पर भोपाल गैस त्रासदी,[188] प्रतिभूति घोटाला,[189] वस्त्र नीति,[190] दक्षिणी अफ्रीका में जातीय उपद्रवों,[191] आदि के संबंध में चर्चा की गई। राम-जन्म भूमि-बाबरी मस्जिद ढांचे को गिराये जाने संबंधी वक्तव्य पर भी तत्काल चर्चा की गई।[192]

पहले से ही स्वीकृत किए गए ध्यानाकर्षण प्रस्ताव के संबंध में वक्तव्य देना

कोई भी मंत्री ध्यानाकर्षण प्रस्ताव के उत्तर में भी वक्तव्य देता है। तथापि, इससे किसी मंत्री को ध्यानाकर्षण प्रस्ताव को शुरू करते समय बिना कोई प्रतीक्षा किए उसी विषय पर स्वप्रेरित वक्तव्य देने से मनाही नहीं है।

जब मंत्री महोदय मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश में हरिजनों की झोंपड़ियों के जलाये जाने के संबंध में एक वक्तव्य देने ही वाले थे तो तब एक औचित्य का प्रश्न उठाया गया और कहा गया कि मंत्री महोदय किसी ऐसे विषय के संबंध में वक्तव्य नहीं दे सकते जिसे अगले दिन के लिए स्वीकृत किए जाने की संभावना है। तब सभापति ने यह सुझाव दिया कि मंत्री महोदय ध्यानाकर्षण प्रस्ताव के शुरू होने तक ऐसे वक्तव्य को स्थगित कर सकते हैं। सभा के नेता ने सभापति का ध्यान नियम 251 की ओर दिलाया और यह कहा कि मंत्री महोदय को यह अधिकार है कि वह सभापति की अनुमति प्राप्त करने के बाद सभा में वक्तव्य दे सकते हैं, भले ही उस समय ध्यानाकर्षण प्रस्ताव अथवा विशेष उल्लेख का कोई मामला लंबित हो। चूंकि, इस मुद्दे पर विवाद उत्पन्न हो गया था, इसलिए सभा की बैठक सभापति के कक्ष में परामर्श करने के लिये मध्याह्न भोजन के लिये निर्धारित समय से पूर्व ही स्थगित कर दी गई। सभा की बैठक के पुन: आरम्भ होने के बाद, उपसभापति ने यह घोषणा की कि सभापति से यह निर्देश प्राप्त हुआ है कि मंत्री महोदय को वक्तव्य देने की अनुमति दी जा सकती है और कि उस पर कोई प्रश्न नहीं पूछा जाना चाहिए और कि इस विषय पर नियमित चर्चा करने के लिए ध्यानाकर्षण प्रस्ताव पर विचार करने की अनुमति अगले दिन के लिए दी जायेगी।[193]

मत-विभाजन

सामान्य प्रक्रिया

जब तक संविधान में अन्यथा उपबंधित न हो,[194] किसी भी सदन की किसी बैठक में अथवा दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में सभी प्रश्नों पर अध्यक्ष अथवा सभापति या अध्यक्ष के रूप में कार्य कर रहे व्यक्ति को छोड़कर सभा में उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों के बहुमत द्वारा लिये जाते हैं।[195]

साधारणतया, सदन में प्रश्नों पर निर्णय मतदान के द्वारा लिये जाते हैं तथा किसी प्रश्न को स्वीकृत अथवा अस्वीकृत करने के लिये साधारण बहुमत की आवश्यकता होती है। कभी-कभी किसी प्रस्ताव पर निर्णय करने के लिए मत-विभाजन भी हो जाता है जिससे किसी प्रश्न के पक्ष में और विपक्ष में मतदान करने के इच्छुक सदस्य वास्तविक रूप से दो गुटों में विभाजित हो जाते हैं।[196] यद्यपि सदन में मतदान की इलेक्ट्रो-मेकेनिकल प्रणाली के लागू हो जाने के कारण, सदन के वास्तविक रूप में दो गुटों में विभाजित होने के बहुत ही कम अवसर रह गए हैं, फिर भी मतदान प्रक्रिया के लिये ''मत-विभाजन'' शब्द का निरन्तर प्रयोग किया जाता रहा है।

चर्चा की समाप्ति पर सभापति सदन के समक्ष प्रस्ताव उपस्थित करता है और जो सदस्य प्रस्ताव का समर्थन करना चाहते हैं, उन्हें उसके पक्ष में 'हां' कहने के लिए और जो प्रस्ताव का विरोध करना चाहते हैं, उन्हें उसके विपक्ष में 'ना' शब्द कहने के लिए आमंत्रित करता है।[197] तब सभापति कहता है (अस्थायी रूप से) ''मैं सोचता हूं कि पक्ष में (और विपक्ष में मतदान करने वाले सदस्यों ने, जैसी भी स्थिति हो) अपना मत व्यक्त कर दिया है।'' यदि निर्णय के संबंध में सभापति की राय पर चुनौती नहीं दी जाती, तो वह दोबारा कहता है (निश्चित रूप से) ''पक्ष में (और विपक्ष में मतदान करने वाले सदस्यों ने जैसी भी स्थिति हो), अपना मत व्यक्त कर दिया है'' और सदन के समक्ष रखे गए प्रस्ताव पर तद्नुसार निर्णय लिया जाता है।[98] यदि प्रस्ताव पर निर्णय के संबंध में सभापति की राय को सदन में चुनौती दी जाती है तो तब उस अवस्था में यदि वह उचित समझे, तो ''पक्ष में'' और ''विपक्ष में'' मतदान करने वाले सदस्यों को क्रमश: अपने-अपने स्थानों पर खड़ा होने के लिये कह सकता है, और सदस्यों की गिनती करने के बाद सदन के निर्णय की बाबत घोषणा कर सकता है। ऐसी स्थिति में मतदान करने वाले सदस्यों के नाम अभिलिखित नहीं किये जाते।[199]

> जिस समय तमिलनाडु में राष्ट्रपति-शासन की अवधि बढ़ाये जाने का संकल्प मतदान के लिये उपस्थित किया गया था, तब उस समय मत-विभाजन की मांग की गई थी। सभापीठ द्वारा सदस्यों से कहा गया कि वे अपने-अपने स्थानों पर खड़े हो जायें और ''पक्ष में'' तथा ''विपक्ष में'' मतदान करने वाले सदस्यों की गिनती करने के बाद संकल्प को स्वीकृत घोषित किया गया था। एक सदस्य ने इस प्रक्रिया पर आपत्ति उठायी थी परन्तु नियम 252(3) को ध्यान में रखते हुए उनकी इस आपत्ति को वैध नहीं ठहराया गया।[200]

यदि किसी प्रस्ताव पर निर्णय के संबंध में सभापति की राय को चुनौती दी जाती है और यदि वह उपरोक्त प्रक्रिया नहीं अपनाता है तो तब वह आदेश देता है कि अमुक प्रस्ताव पर मत-विभाजन कराया जाए।[201] इसके दो मिनट के बाद, सभापति, दूसरी बार प्रस्ताव उपस्थित करता है और यह घोषणा करता है कि क्या उसकी राय में प्रस्ताव के ''पक्ष में'' और ''विपक्ष में'' मतदान करने वाले सदस्यों ने मत व्यक्त कर दिया है।[202] यदि इस प्रकार घोषित की गयी राय को पुन: चुनौती दी जाती है, तो तब (1) स्वचालित मत रिकॉर्डिंग मशीन को चलाकर अथवा (2) सदस्यों को लॉबियों में भेजकर मतदान कराया जा सकता है।[203]

जब तक सदस्यगण सभापति की राय को चुनौती नहीं देते और वे मत-विभाजन की मांग नहीं करते, जिस अवस्था में सभापति मत-विभाजन कराये जाने का आदेश देता है, तब तक प्रश्नों पर सामान्यतया ध्वनि-मत के द्वारा ही निर्णय लिया जाता है। जब किसी प्रश्न पर ध्वनि-मत से निर्णय लिया जाता है, तब सभापति ''पक्ष में'' और ''विपक्ष में'' मतदान करने वाले सदस्यों की संख्या की घोषणा नहीं करता।

> सैद्धान्तिक रूप से वह (सभापीठ) सदस्यों की आवाज से उत्पन्न होने वाले स्वरों की तीव्रता का आकलन करके यह निश्चय करते हैं कि ''पक्ष में'' अथवा ''विपक्ष में'' उठने वाले स्वरों में से किनके स्वर अधिक है। व्यावहारिक दृष्टि से, सभापति का निर्णय सदन में व्यक्त की गई राय के सन्तुलन के बारे में उनके ज्ञान पर आधारित होता है। जब तक कुछ सदस्य उनके उस समय के निर्णय को ''जी, नहीं'', कहकर चुनौती नहीं देते, जब वह यह कहते हैं कि उनके विचार से ''पक्ष में'' अथवा ''विपक्ष में'' मतदान करने वाले सदस्यों ने अपना मत व्यक्त कर दिया है, तब सभापीठ द्वारा **घोषणा** की जाती है कि प्रस्ताव के ''पक्ष में'' अथवा ''विपक्ष में'', मतदान करने वाले सदस्यों ने,जैसी भी स्थिति हो, अपना मत व्यक्त कर दिया है। तथापि, यदि, अल्पमत वर्ग अथवा कोई अकेला सदस्य उनके ऐसे निर्णय को चुनौती देता है तो तब वह निर्देश देते हैं कि लॉबी खाली करा दी जाये।[204]

यदि कोई सदस्य किसी प्रस्ताव के संबंध में सभापीठ के निर्णय को चुनौती देना चाहता है, तो उसे

सभापीठ द्वारा ''मैं सोचता हूं कि पक्ष में अथवा विपक्ष में मतदान करने वाले सदस्यों ने अपना मत व्यक्त कर दिया है'' कहने के तत्काल बाद और उनके द्वारा प्रस्ताव के परिणाम की घोषणा किये जाने से पूर्व ऐसा कर लेना चाहिए।

> एक ऐसा अवसर भी आया जब एक गैर-सरकारी सदस्य के किसी संकल्प को ध्वनि-मत से स्वीकृत किया गया घोषित कर दिया गया। इस पर सदस्यों ने यह कहकर आपत्ति उठायी कि उन्होंने तो परिणाम की घोषणा करने से पूर्व मत-विभाजन की मांग की थी। परिणामस्वरूप इस मामले पर विवाद उत्पन्न हो गया और इसलिए सदन की बैठक कुछ समय के लिये परामर्श करने के लिये स्थगित कर दी गयी। सदन के पुन: समवेत होने के पश्चात् उपस्थित-कर्ता सदस्य द्वारा दो उपस्थित किए जाने की अनुमति दी गई थी और यथासंशोधित संकल्प पर मत लिया गया और उसे पुन: स्वीकृत किया गया।[205]

जब मत-विभाजन होने वाला होता है, तो तब वह केवल संबंधित सदन के सदस्यों को ही भीतरी-लॉबी (इनर लॉबी) में उपस्थित रहने का अधिकार होता है और अन्य सभी व्यक्तियों को लॉबी को खाली कर देना चाहिए। दूसरे शब्दों में मत-विभाजन के लिए लॉबी को खाली करना आवश्यक होता है। दूसरे सदन का ऐसा सदस्य, जो मंत्री भी हो, सदन में उपस्थित रह सकता है, हालांकि उसे मत देने का कोई अधिकार नहीं है। तथापि, यह अधिक बेहतर होगा कि ऐसा सदस्य सदन में उपस्थित ही न रहे जिससे कि संभावित आपत्तियों से बचा जा सके।

> जब राष्ट्रपति के अभिभाषण पर धन्यवाद के प्रस्ताव पर लाए गए एक संशोधन पर मत लिया जा रहा था, तब एक सदस्य ने प्रधान मंत्री को छोड़कर अन्य सभी मंत्रियों, जोकि उस सदन के सदस्य नहीं थे, से यह अनुरोध किया कि वे सभी मतदान से पूर्व सदन से बाहर चले जायें। तथापि, विपक्ष के नेता (श्री लालकृष्ण आडवाणी) इस सुझाव से सहमत नहीं हुए। उनकी यह राय थी कि जो-जो मंत्री संबद्ध सदन के सदस्य नहीं थे, वे उस सदन में उपस्थित रह सकते थे, इस पर सभापति ने यह टिप्पणी की: ''जो भी व्यक्ति इस सदन का सदस्य नहीं है, मैं उसे मत देने की अनुमति नहीं दूंगा।'' मामला यहीं समाप्त हो जाता है।[206]

> संविधान (चौंसठवां संशोधन) विधेयक पर विचार किये जाने वाले प्रस्ताव पर सदन में मत लिए जाने से पहले एक सदस्य द्वारा उन मंत्रियों की उपस्थिति के संबंध में आपत्ति उठाई गई जोकि उस सदन के सदस्य नहीं थे। यह सदस्य चाहते थे कि जब किसी मामले पर निर्णय होने वाला हो, तो तब संबंधित मंत्रियों को सभा से चले जाने के लिए कह दिया जाना चाहिये। तथापि, सभापति ने इस आपत्ति को यह कहते हुए नहीं माना कि सभापीठ को कोई अधिकार नहीं है कि वह उन्हें सदन से बाहर चले जाने के लिए कहे। यह उनकी स्वेच्छा पर निर्भर करता है। तथापि, उन्हें भीतरी लॉबी में नहीं जाना चाहिए।[207]

परम्परा के अनुसार, जहां किसी विधेयक के खण्डों अथवा खण्डों पर लाए गए संशोधनों के संबंध में अनेकों बार मत-विभाजन कराये जायें, ये सब एक के बाद एक कराये जाते हैं, वहां लॉबी को बार-बार खाली कराये जाने की आवश्यकता नहीं होती।

मत-विभाजन की घंटियों का संचालन

> राज्य सभा और लोक सभा की मत-विभाजन घंटियों पर क्रमश: लाल और हरा रंग किया जाता है।
>
> इन दोनों प्रकार की मत-विभाजन घंटियों की ध्वनि में भिन्नता यह है कि राज्य सभा की घंटी रुक-रुक कर बजती है जबकि लोक सभा की घंटी लगातार बजती है।
>
> जब कभी राज्य सभा में मत-विभाजन का आह्वान किया जाता है तो उस समय महासचिव अपनी मेज पर लगे बटन को दबाता है जिससे मत-विभाजन के उद्देश्य से सदस्यों को सदन में बुलाने के लिए संसद् भवन, संसदीय सौध और संसदीय ग्रंथालय भवन के विभिन्न हिस्सों में एक सौ चौबीस स्थानों पर घंटी बजती है।

संसद् के दोनों कक्षों के लिए मत-विभाजन घंटियां संसद् भवन, संसदीय सौध की सभी मंजिलों में लगाई गई हैं, परन्तु विशेषकर समिति कक्षों, पुस्तकालय कक्षों, मंत्रियों के कक्षों, सूचना कार्यालय, डाक घर, जलपान गृह के कक्षों और प्रतीक्षालय हॉलों में अथवा उनके आस-पास लगाई गई हैं।[208]

मत-विभाजन के दौरान किसी भाषण का नहीं किया जाना

जब मत-विभाजन के लिए आह्वान कर दिया गया हो और लॉबियों को खाली कराया जा रहा हो तो उस समय वाद-विवाद बन्द कर दिया जाता है और कोई भी सदस्य बोलने के लिये अथवा सदन को सम्बोधित करने के लिए खड़ा नहीं हो सकता। जब लॉबियों को खाली कराया जा रहा हो तो कार्यवाहियों में कोई भाषण अथवा निवेदन अभिलिखित नहीं किया जाता है।

मत-विभाजन की अनुमति नहीं देने का सभापति का स्वनिर्णय

इसके लिये कि सदन को साधारण से अवसरों पर मत-विभाजन के लिए बाध्य न किया जाए, सभापति को, यदि वह समझे कि मत-विभाजन की मांग अनावश्यक रूप से की जा रही है, मत-विभाजन के अनुरोध को अस्वीकार करने का अधिकार प्राप्त है। वह उन सदस्यों को, जो उसके निर्णय का समर्थन करते हैं और उन सदस्यों को, जो उसके निर्णय को चुनौती देते हैं, बारी-बारी से खड़े होने के लिए भी कह सकता है और उसके आधार पर, जैसा वह उपयुक्त समझे, घोषणा कर सकता है कि निर्णय 'हां' वालों (अथवा 'ना' वालों) के पक्ष में गया। जैसाकि पहले बताया गया है।

एक अवसर पर जब एक सदस्य ने अपने संशोधन पर मत-विभाजन के लिए कहा था तो उप-सभाध्यक्ष ने सदस्यों का ध्यान नियम 252 के उप-नियम (3) की ओर दिलाया और उप-नियम में ''यदि वह उपयुक्त समझे'' शब्दों पर जोर दिया और टिप्पणी की थी कि संबंधित सदस्य ने मत-विभाजन के लिए कहने को वास्तव में समुचित नहीं समझा।[209]

स्वचालित मतांकन यंत्र (ऑटोमैटिक वोट रिकॉर्डर) द्वारा मत-विभाजन

यदि सभापति यह निर्णय करता है कि स्वचालित मतांकन यंत्र चलाकर मत लिये जाने चाहिए तो वह तद्नुसार निदेश देता है और यंत्र चालू कर दिया जाता है। प्रत्येक सदस्य को एक निश्चित सीट दी जाती है और सदस्य उसी सीट से इस उद्देश्य के लिए उपलब्ध कराए गए अपेक्षित बटन को दबाकर अपना मतदान करता है। दिसम्बर, 1994 में राज्य सभा में एक नयी कम्प्यूटर नियंत्रित एकीकृत ध्वनि, साथ-साथ भाषांतरण प्रणाली और मतांकन प्रणाली की स्थापना की गई थी। उस प्रणाली के अन्तर्गत प्रत्येक सदस्य के लिए एक एकीकृत माइक्रोफोन और मतदान करने के लिये 'कंसोल' उपलब्ध कराया गया है जिसमें चार बटन होते हैं–''पी॰आर॰ई॰एस॰''–''पी'' उपस्थित होने के लिये, ''ए॰बी॰एस॰टी॰'' – ''ओ'' मतदान में भाग न लेने के लिये; ''ए॰वाई॰ई॰एस॰''–''ए''' हां' के लिये और ''एन॰ओ॰ई॰एस॰'' – ''एन''' ना' के लिये। वहां पर एक ''लाल '' रेड रंग का सुरक्षा बटन (वोट एक्टिवेशन) भी अलग से **भाषा चयनकर्ता** (लेंगुएज सेलेक्टर) पर लगाया गया है, जिसे मतदान वाले बटन के अलावा दबाना पड़ता है। **वैध मत दर्ज कराने के लिये दोनों ही बटनों को मतदान समाप्ति के समय एक साथ दबाना पड़ता है।**

उदाहरण के लिये, यदि मतदान की अवधि दस सेकिण्ड है, तो बटनों को दसवें सेकिण्ड तक दबाए रखे गए बटनों से वोट दर्ज किया जाएगा। एक अथवा इन दोनों बटनों को मतदान की अवधि समाप्त होने से पहले छोड़ देने पर मत दर्ज नहीं किया जाएगा।

मतदान की अवधि के दौरान, सदस्य किसी भी समय अपने मत को बदल सकता है। जब मतदान की अवधि समाप्त होगी तो केवल उस समय दिया गया मत दर्ज किया जाएगा। मत-गणना का समय कुल

परिणाम प्रदर्शन पट्ट/वृहत् स्क्रीन हॉल प्रदर्शन (टोटल रिजल्ट डिस्पले बोर्ड्स/लार्ज स्क्रीन हॉल डिस्प्ले) पर दिखाया जाता है। कक्ष में दो किस्म के प्रदर्शन पट्ट उपलब्ध कराए गए हैं। एक सैट पर व्यक्तिगत परिणाम दर्शाए जाते हैं और दूसरे पर कुल परिणाम दर्शाए जाते हैं।

व्यक्तिगत परिणाम पैनल सभापति के आसन के दोनों तरफ स्थित हैं जो कक्ष की बैठने की व्यवस्था के समान ही भौगोलिक योजना के अनुसार ही लगाए गए हैं। प्रत्येक सदस्य के लिए तद्नुरूपी मत-विभाजन, प्रदर्शन क्रम के साथ, पैनल पर दर्शाया जाता है जो एक हरे रंग का अक्षर 'ए' हां के लिये, एक लाल रंग का अक्षर 'एन' नहीं के लिये, एक पीले रंग का अक्षर 'ओ' मतदान में भाग न लेने के लिये, और एक कहरूवे के रंग का अक्षर 'पी' उपस्थित होने के लिए होता है। ये मतदान करते समय तात्कालिक परिवर्तन होते हुए दर्शाए जाते हैं और इन्हें मतदान समाप्त होने पर 'ए', 'एन' अथवा 'ओ' तीन वर्णों पर 'स्थिर' (फ्रोजन) कर दिया जाता है। कुल परिणाम सभापीठ के बाईं और दायीं तरफ स्थित प्रदर्शन पैनल पर आ जाते हैं।[210]

महासचिव की मेज पर एक कुंजी पटल लगाया गया है जिसे सभापति के निर्देश पर संचालित करके महासचिव मतदान प्रक्रिया को आरम्भ कर देता है और ऐसा करने से पहले वह, यदि सभापीठ द्वारा निदेश दिया जाता है, तो सदन के सदस्यों को उस प्रक्रिया के विषय में बताता भी है। मतदान प्रक्रिया कक्ष के दो कोनों में लगे वृहत् स्क्रीन प्रदर्शन (लार्ज स्क्रीन डिस्पले) पर संगीतमय ध्वनि से प्रारम्भ होती है।

प्रदर्शन पट्ट पर मतदान का परिणाम आने पर महासचिव ''हां'' वाले और ''ना'' वाले सदस्यों की कुल संख्या को सभापति के समक्ष प्रस्तुत करता है। मत-विभाजन के परिणाम को सभापति द्वारा घोषित किया जाता है और इसे चुनौती नहीं दी जा सकती।[211]

ऐसा कोई सदस्य जो किसी ऐसे कारण से, जिसे सभापति पर्याप्त समझे, अपना मतदान नहीं कर सका हो तो उसे मत-विभाजन के परिणाम की घोषणा से पहले, उसे वह प्रस्ताव के पक्ष में है अथवा इसके विरुद्ध है, मौखिक रूप से कहकर अपना मत दर्ज कराने की अनुमति दी जा सकती है।[212] इसी प्रकार से यदि किसी सदस्य को लगता है कि उसने गलती से गलत बटन दबाकर मतदान कर दिया है तो उसे मत-विभाजन के परिणाम की घोषणा होने से पहले ही अपनी गलती ठीक करने की अनुमति दी जाती है।[213]

15 दिसम्बर, 1961 को उपसभापति ने संविधान (ग्यारहवां संशोधन) विधेयक, 1961 के एक खण्ड के संशोधन के संबंध में मतदान आंकड़ों को सही करने के संबंध में निम्नलिखित घोषणा की थी:

...बहुत-से सदस्य खड़े हो गए और यह निवेदन किया कि उन्होंने सदन के समक्ष रखे गए प्रस्ताव को सही ढंग से नहीं समझा है और इसलिये अपने मत समुचित रूप से दर्ज नहीं करा सके। कुछ सदस्यों ने यह बताया कि उन्होंने मतदान ही नहीं किया था; कुछ सदस्यों ने कहा कि उन्होंने संशोधन के पक्ष में गलती से मतदान कर दिया था; और एक सदस्य ने बताया कि उसने इसके पक्ष में मतदान करने की बजाए इसके विरोध में मतदान किया था। मैंने उन सदस्यों को अपने नाम देने की अनुमति दी थी और तद्नुसार उनके नाम अभिलिखित किए गए थे और सदन का निर्णय घोषित करने के उद्देश्य से उन्हें ध्यान में रखा गया था; जिस रूप में निर्णय की घोषणा की गई थी वह निम्नलिखित रूप में था: 'हां' वाले...25; 'ना' वाले...134।

मत-विभाजन सूची की फोटोस्टेट प्रति की जांच करने पर यह पाया गया कि उन 10 सदस्यों ने, जिनके नाम उपरोक्त अभिलेख में दर्ज थे, जैसाकि ऊपर बताया गया है, वास्तव में मतदान में भाग लिया था और उनके नाम ''हां'' वाली सूची में शामिल थे। इन सदस्यों ने केवल यही अनुरोध किया था कि उनकी गलतियों को सही करके उनके नाम ''हां'' वाली सूची से ''ना'' वाली सूची में स्थानांतरित कर दिये जायें। मत-विभाजन के परिणाम की घोषणा करते समय उन दस सदस्यों के नाम यद्यपि ''ना'' वाली सूची में शामिल कर लिये गये थे तथापि उनके नाम ''हां'' वाली सूची से हटाये नहीं गये थे। एक और

> सदस्य ने गलती से ''ना'' में मतदान कर दिया था और वह अपनी गलती ठीक कराना चाहता था और निर्णय की घोषणा करते समय उस सदस्य का नाम भी ''हां'' वाली सूची से शामिल कर लिया गया लेकिन उसका नाम भी ''ना'' वाली सूची से निकाला नहीं गया था।
>
> राज्य सभा के प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन विषयक नियमों के नियम 214क (पुराना) के उप-नियम (5) के अन्तर्गत यदि किसी सदस्य को यह पता चले कि उसने भूल से गलत बटन दबाकर मतदान कर दिया है और यदि वह उसे विभाजन का परिणाम घोषित किये जाने से पहले सभापीठ की जानकारी में लाता है तो उसे अपनी भूल में सुधार करने की अनुमति दी जा सकती है।
>
> अत: इससे यह पता चल सकेगा कि विभाजन संबंधी आंकड़े की घोषणा करने में गलती थी। सदन संशोधन के संबंध में पहले ही निर्णय ले चुका है और निश्चिय रूप से इस गलती का इसके ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। फिर भी, मेरे विचार से अभिलेख में सही स्थिति दर्शायी जानी चाहिए।
>
> तद्नुसार, मैंने सदन के 12 दिसम्बर, 1961 के अभिलेख में आवश्यक सुधार करने का निर्देश दे दिया है। सुधार के फलस्वरूप विभाजन का परिणाम इस प्रकार होगा: हां वाले.....15, ना वाले....134

उसके बाद, एक सदस्य ने औचित्य का प्रश्न उठाते हुए यह बताया कि इस व्यवस्था के कारण एक गलत पूर्वोदाहरण बन गया है और परिणाम की घोषणा हो जाने के बाद मतदान संबंधी आंकड़े में परिवर्तन नहीं किया जा सकता। उपसभापति ने पुन: (पुराने) नियम 214क(5) वर्तमान नियम 253(5) के अनुरूप का उल्लेख किया और यह कहा:

> जिस दिन मतदान कराया गया था उस दिन कई सदस्यों ने यह कहते हुए निवेदन किया कि उन्होंने गलत मतदान कर दिया है, और इसलिये उनका मत ध्वनिमत से रिकॉर्ड किया गया था। इसकी जांच फोटोस्टेट प्रति से भी नहीं की जा सकी थी क्योंकि वह प्रति कार्यालय में अगले दिन ही उपलब्ध हो पायी थी। और मैं यह पाता हूं कि दस व्यक्तियों ने दो बार मतदान कर दिया है। अब केवल फोटोस्टेट प्रति के अनुरूप अभिलेख में सुधार करने का अनुरोध किया गया है और ''हां'' वाली सूची या ''ना'' वाली सूची में किसी के मत को बाहर नहीं निकाला गया है। मेरे विचार में इसमें कोई औचित्य का प्रश्न नहीं है और दिया गया विनिर्णय सही है।[214]

पर्चियों के वितरण के माध्यम से मत-विभाजन

सभा में पर्चियों के वितरण द्वारा मत-विभाजन के तरीके का इस्तेमाल केवल तभी किया जाता है, जब स्वचालित मतांकन यंत्र खराब हो गया हो। जब कभी इस तरीके से मत-विभाजन आवश्यक होता है, सदस्यों को अपने मत को दर्ज करवाने के लिए 'हां/ना' वाली मुद्रित पर्चियां उनकी सीट पर दी जाती हैं। सदस्यों के उपयोग के लिये पर्चियां ब्लॉक-वार अलग-अलग रंगों में मुद्रित की जाती हैं। सदस्यों को इन पर्चियों पर अपने हस्ताक्षर करके तथा अपना नाम, विभाजन क्रमांक और तिथि को उचित स्थान पर सुपाठ्य रूप में लिखकर अपनी पसंद के अनुसार अपना मत दर्ज करना होता है।

मतों को अभिलिखित करने के बाद विभाजन-लिपिक प्रत्येक सदस्य से इन पर्चियों को इकट्ठा करके सभा पटल अधिकारी को सौंप देते हैं, जो उनकी छंटनी करता है, अभिलिखित मतों की गणना करके परिणाम संकलित करता है। तत्पश्चात् सभापीठ द्वारा इस प्रकार प्राप्त परिणाम की घोषणा की जाती है और इसके बाद प्रत्येक सदस्य के मत के विवरण सहित इसे मुद्रित किए जाने वाले वाद-विवाद में शामिल कर लिया जाता है।

संविधान (पैंसठवां संशोधन) विधेयक, 1989 पर विचार किए जाने के प्रस्ताव पर सभापति ने यह निदेश किया था: किसी भी भ्रम से बचने के लिए पर्चियां वितरित की जाती हैं। प्रत्येक सदस्य अपनी विभाजन-संख्या का उल्लेख करेगा और 'हां' अथवा 'ना' लिखेगा और अपने हस्ताक्षर करेगा ताकि हमारे पास इसका अभिलेख रहे।[215]

लॉबियों में जाने के माध्यम से मत-विभाजन

जब सभापति यह निर्णय करे कि सदस्यों द्वारा सभा कक्षों में जाकर मत अभिलिखित करवाये जाने चाहिए तो वह 'हां' वाले सदस्यों को दायें सभा कक्ष में और 'ना' वाले सदस्यों को बायें सभा कक्ष में जाने के लिए कहेगा। यथास्थिति 'हां' वालों और 'ना' वालों के सभा कक्ष में, प्रत्येक सदस्य अपनी विभाजन-संख्या बोलता है और विभाजन लिपिक विभाजन-सूची में सदस्य की विभाजन-संख्या पर निशान लगाते हुए, साथ-साथ सदस्य का नाम पुकारता है।[216]

सभा कक्षों में मतदान पूर्ण होने के बाद, विभाजन लिपिक विभाजन-सूचियां महासचिव को देता है। जो मतों की गणना करके 'हां' और 'ना' वाले मतों का जोड़ सभापति को प्रस्तुत करता है।[217] तत्पश्चात् सभापति द्वारा मत-विभाजन के परिणाम की घोषणा की जाती है और उस पर आपत्ति नहीं की जा सकती।[218]

कोई सदस्य जो रोग या अशक्तता के कारण विभाजन सभा कक्ष तक जाने में असमर्थ हो, वह सभापति की अनुमति से, अपना मत या तो अपने स्थान पर या सदस्यों के सभा कक्ष में अभिलिखित करा सकेगा।[219] यदि किसी सदस्य को यह पता चले कि उसने भूल से गलत सभा कक्ष में मत दे दिया है, तो यदि वह उसे सभापति की जानकारी में मत-विभाजन का परिणाम घोषित किये जाने से पहले लाये, तो उसे अपनी भूल सुधारने की अनुमति दी जा सकेगी।[220] जब मत-विभाजन सूचियां महासचिव की मेज पर लायी जायें तो कोई सदस्य, जिसने उस समय तक अपना मत अभिलिखित न कराया हो, किन्तु जो तब अपना मत अभिलिखित कराना चाहता हो, सभापति की अनुमति से ऐसा कर सकेगा।[221]

सभा ने आवश्यक सेवा विधेयक, 1981 के खण्ड-14 के संबंध में मत लेने के लिये बहुत लम्बी बैठक की थी। इस अवधि के दौरान, सभा में 58 मत-विभाजन कराये गये थे। उनमें से 54 स्वचालित मतांकन यंत्र चलाकर तथा 4 सभा कक्ष में जाकर कराये गये थे।[222]

'उपस्थित और मतदान' के लिए अनुपस्थिति की गणना न किया जाना

जैसाकि विधान से संबंधित अध्याय-21 में पहले ही दिया जा चुका है, उपस्थित रहते हुए भी किसी मत-विभाजन से अनुपस्थित रहने वाले सदस्यों की किसी मुद्दे के परिणाम की घोषणा करते समय गणना नहीं की जाती है। कोई सदस्य, जो मतदान में या तो इलेक्ट्रॉनिक मतांकन यंत्र द्वारा या मत पर्ची पर या किसी अन्य रीति से ''अनुपस्थित'' के रूप में मत दर्ज कराता है, तो वह ऐसा केवल सभा में अपनी उपस्थिति दर्शाने और मतदान से अनुपस्थित रहने के अपने आशय की सूचना देने के लिये करता है। वह संविधान के संशोधन से सम्बद्ध अनुच्छेद 368 में प्रयुक्त ''उपस्थित रहना और मतदान करना'' शब्दों के अर्थ के अन्तर्गत अपना मत अभिलिखित नहीं कराता है।

पीठासीन अधिकारियों द्वारा मत दिया जाना

संविधान के अधीन, सभापति या सभापति के रूप में कार्य कर रहा व्यक्ति मत-विभाजन में अपना मत नहीं दे सकता है। उसके पास तो केवल निर्णायक मत होता है जिसका वह मतों की समानता होने के

मामले में प्रयोग करेगा।[223] उपसभापति या उपसभाध्यक्षों की तालिका के उस सदस्य को जो मतदान के समय पीठासीन हो, मत-विभाजन के समय मतदान करने से विवर्जित किया गया है और वह मतों की संख्या बराबर होने की स्थिति में निर्णायक मत दे सकता है और ऐसी स्थिति में उसके लिए ऐसा करना आवश्यक है।

पीठासीन अधिकारी/समिति के अध्यक्ष द्वारा निर्णायक मत दिया जाना

जैसाकि ऊपर कहा गया है संविधान, अध्यक्ष के रूप में कार्य करने वाले व्यक्ति को प्रथमत: मतदान करने से विवर्जित करता है अर्थात् वह एक साधारण सदस्य की तरह किसी मत-विभाजन में मतदान नहीं कर सकता है; वह केवल निर्णायक मत दे सकता है जो उसके लिए मतों की संख्या बराबर होने की स्थिति में देना आवश्यक है।

> राज्य सभा में पहली बार जब दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अध्यादेश, 1991 का निरनुमोदन चाहने वाले परिनियत संकल्प पर मत लिया गया था और मतों की संख्या बराबर [39 मत संकल्प के पक्ष में और 39 मत उसके विरोध में] हो गई थी तब उपसभाध्यक्ष ने मतों की बराबरी को भंग करने के लिए संकल्प के पक्ष में निर्णायक मत दिया था।[224]

संसदीय समितियों के मामले में राज्य सभा के प्रक्रिया-विषयक नियमों में समिति के अध्यक्ष द्वारा दूसरा या निर्णायक मत देने के संबंध में भिन्न-भिन्न उपबंध दिये गये हैं। उदाहरण के लिए, किसी विधेयक संबंधी प्रवर समिति का अध्यक्ष या उस समिति का सभापतित्व करने वाले अन्य व्यक्ति को दूसरा या निर्णायक मत देने का अधिकार दिया गया है;[225] जबकि अधीनस्थ विधान, सरकारी आश्वासनों, सभा पटल पर रखे गये पत्रों संबंधी समितियों और आवास समिति के मामले में विशेषरूप से यह उपबंध किया गया है कि ऐसी किसी समिति का अध्यक्ष प्रथमत: मतदान नहीं करेगा किन्तु किसी मामले में मतों की संख्या बराबर होने की स्थिति में उसका निर्णायक मत होगा और वह निर्णायक मत देगा।[226] याचिका समिति और विशेषाधिकार समिति से संबंधित नियमों में इस पहलू पर कुछ नहीं कहा गया है।

औचित्य प्रश्न

भूमिका

एक सबसे अधिक झुंझलाहट भरी संसदीय प्रक्रिया जो किसी पीठासीन अधिकारी के सामने आती है और जिससे उसे निपटना पड़ता है, वह है चर्चा के दौरान उठाया जाने वाला औचित्य प्रश्न। इस प्रक्रिया से वास्तव में ही सभापीठ के सामने समस्याएं पैदा हो जाती हैं और इससे उन सदस्यों में रोष पैदा होता है जो नियमों का पालन करते हैं और औचित्य प्रश्न की आड़ में तर्क-वितर्क या चर्चा के मामले नहीं उठाते। सभापीठ की समस्या यह है कि वह जब तक सदस्य के कथन को कम-से-कम काफी हद तक न सुन ले तब तक वह (सभापीठ) यह निर्णय करने की स्थिति में नहीं होता कि यह औचित्य प्रश्न नहीं है। निस्संदेह सभापीठ किसी भी ऐसे सदस्य को डांट सकता है जो अशिष्टतापूर्वक और बारम्बार 'कल्पित' या अनुचित औचित्य प्रश्न उठाता हो। किन्तु यहां यह बात भी है कि सभापति सामान्यत: औचित्य प्रश्न सुनने से इनकार नहीं कर सकता। तथापि, कुछ ऐसी परिस्थितियां होती हैं जिनमें सभापीठ सीधे प्रश्न सुनने से इनकार कर सकता है ताकि कम-से-कम उन परिस्थितियों में ''औचित्य प्रश्नकर्त्ताओं'' को अपनी ही बात मनवाने का मौका न मिले और उन प्रश्नों को करने या उनके बारे में सुनने में सभा का समय बरबाद न हो जोकि स्पष्टत: औचित्य प्रश्न नहीं हैं।

औचित्य प्रश्न क्या होता है

औचित्य प्रश्न, प्रक्रिया संबंधी उन नियमों या संविधान के उन अनुच्छेदों जिनसे सभा के कार्य विनियमित होते हैं, की व्याख्या या प्रवर्तन से संबंधित एक ऐसा प्रश्न है जो सभा में उठाया जाता है और सभापीठ के निर्णय के लिए प्रस्तुत किया जाता है।

कोई भी सदस्य सभापति के तत्काल ध्यान में कोई भी ऐसा प्रसंग ला सकता है जिसे वह आदेश का उल्लंघन अथवा सभा की किसी ऐसी लिखित या अलिखित विधि जिसके बारे में सभापति को पता न चले, का अतिक्रमण मानता हो, तथा वह प्रक्रिया में किसी भी अस्पष्टता के संबंध में सभापति से मार्गदर्शन एवं सहायता भी मांग सकता है। केवल ऐसे मामलों में किसी भी सदस्य को यह अधिकार होता है कि वह खड़े होकर चर्चा के बीच ही में टोकते हुए यह कहे, ''सभापति महोदय, एक औचित्य प्रश्न के संबंध में'' और उसके बाद उसके समक्ष संक्षेप में औचित्य प्रश्न रखे, हालांकि बहुधा सदस्यों के बीच यह संदेह बना रहता है कि सही-सही अर्थों में औचित्य प्रश्न क्या होता है, और ज्यादातर उत्तर होता है, ''यह औचित्य प्रश्न का मामला नहीं है।''[227]

राज्य सभा के नियमों में उपबन्ध

राज्य सभा के प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन विषयक नियमों का नियम 258 सदस्य को औचित्य प्रश्न पूछने की शक्ति प्रदान करने का उपबन्ध करता है। यह उपबन्ध इस प्रकार है:

(1) कोई सदस्य किसी समय कोई औचित्य प्रश्न सभापति के निर्णय के लिए प्रस्तुत कर सकेगा, किन्तु ऐसा करते हुए वह स्वयं को प्रश्न के कथन तक ही सीमित रखेगा।

(2) सभापति उन समस्त औचित्य प्रश्नों का, जो पैदा हों, निर्णय करेगा और उसका निर्णय अन्तिम होगा।

औचित्य प्रश्न किस प्रकार पूछा जाता है

जिस सदस्य का औचित्य प्रश्न हो उसे खड़े होकर 'औचित्य प्रश्न' कहना चाहिए। जब तक सभापीठ सदस्य की पहचान न कर लें और अनुमति न दे दें तब तक सदस्य को औचित्य प्रश्न के संबंध में आगे चर्चा नहीं करनी चाहिए।[228] तत्पश्चात्, उसे अपने औचित्य प्रश्न पर बोलने के लिए आगे बढ़ना चाहिए। अपना औचित्य प्रश्न व्यक्त करते हुए उसे सभा की प्रक्रिया से संबंधित उस विशिष्ट नियम अथवा संविधान को उद्धृत करना चाहिए जिसकी उपेक्षा अथवा अनदेखी या जिसका उल्लंघन किया गया है। जब सभापति बोल रहा हो तो किसी भी सदस्य को न तो खड़े होकर और न ही बैठकर बोलना चाहिए। सभापति की बात शान्तिपूर्वक सुनी जानी चाहिए और यदि कोई सदस्य बोलना चाहता है तो उसे सभापति के बैठ जाने के बाद तथा सभापति द्वारा बोलने के लिये उसका नाम पुकारे जाने के बाद ही खड़ा होना चाहिए।[229] ऐसे मामले जिन पर सभापति कोई सहायता नही कर सकता, औचित्य प्रश्न का विषय नहीं बनने चाहिए। यदि सदस्य मंत्री से स्पष्टीकरण चाहता है या मंत्री द्वारा दिए गए किसी वक्तव्य पर आपत्ति प्रकट करना चाहता है तो उसे सभापति की स्वीकृति से सभा में ऐसा कहना चाहिए न कि औचित्य प्रश्न के रूप में उसे उठाना चाहिए।

औचित्य प्रश्न उठाए जाने के बाद अपनाई जाने वाली प्रक्रिया

औचित्य प्रश्न उठाने और अपने विचार व्यक्त करने का अधिकार सदस्य का महत्वपूर्ण अधिकार है और उस समय विचाराधीन किसी मामले अथवा किसी कार्य के संबंध में किसी भी समय उसके द्वारा इसका प्रयोग किया जा सकता है। जब औचित्य प्रश्न उठाया जाता है, तो सभा की कार्रवाई स्थगित हो जाती है। औचित्य प्रश्न उठाए जाने पर जो सदस्य उस समय सभा में अपने विचार व्यक्त कर रहा हो, उसे अपना स्थान ग्रहण कर लेना चाहिए।[230] औचित्य प्रश्न पर चर्चा की अनुमति नहीं दी जाती, परन्तु यदि सभापति उचित समझे, तो वह अपना निर्णय देने से पहले सदस्यों के विचार सुन सकता है। यह उस समय सभा के समक्ष प्रस्तुत कार्य के संबंध में ही उठाया जा सकता है; ''सभा के समक्ष कार्य'' का अभिप्राय उस दिन की कार्यावलि में शामिल किए गए कार्य से है।

जब किसी विषय-वस्तु के संबंध में दो अथवा इससे अधिक औचित्य प्रश्न उठाए जाते हैं तो सभापति एक के बाद एक उन पर कार्रवाई कर सकता है और अपना निर्णय दे सकता है।

जो सदस्य औचित्य प्रश्न उठाना चाहता है उसे सभापीठ द्वारा निर्णय दिए जाने से पूर्व अपनी बात कहने का अधिकार है। औचित्य प्रश्न के संबंध में सदस्य द्वारा अपने विचार व्यक्त किये जाने पर सभापीठ यह निर्णय करता है कि जो मुद्दा उठाया गया है वह औचित्य प्रश्न है या नहीं और यदि है, तो वह उस पर अपना निर्णय देता है जो अंतिम होता है। सदस्य सभापीठ की व्यवस्था का विरोध नहीं कर सकते, ऐसा करना सभा और सभापीठ की अवमानना करना होता है। सभापीठ द्वारा दी गई व्यवस्था पर सभा में चर्चा नहीं की जा सकती और न ही इस संबंध में कोई स्पष्टीकरण मांगा जा सकता है।

यदि सभापीठ किसी सदस्य द्वारा उठाए गए औचित्य प्रश्न का संज्ञान नहीं लेता है तो यह पूर्णतया ठीक क्रम में है। सभापीठ किसी औचित्य प्रश्न पर अपनी व्यवस्था को उस समय सुरक्षित रख सकता है और बाद में किसी दिन अपनी व्यवस्था दे सकता है। इसी प्रकार, उपसभापति अथवा पीठासीन सदस्य किसी औचित्य प्रश्न को सभापति के निर्णय हेतु सुरक्षित रख सकता है।

औचित्य प्रश्न कौन उठा सकता है

जैसाकि नियम 258 में प्रावधान है कि 'कोई भी सदस्य' औचित्य प्रश्न प्रस्तुत कर सकता है। नियम 2 परिभाषित करता है कि सदस्य का तात्पर्य राज्य सभा के सदस्य से है। इस संदर्भ में, औचित्य प्रश्न उठाने के लिए मंत्री की सक्षमता के बारे में राज्य सभा में प्रश्न उठाया गया है। जहां तक ऐसे मंत्री का सम्बन्ध है, जोकि सभा का सदस्य है, उसे सभा के सदस्य की हैसियत से सभी अधिकार और विशेषाधिकार प्राप्त हैं, यद्यपि कभी-कभी ऐसे मंत्री के औचित्य प्रश्न उठाने अथवा उसके सम्बन्ध में बोलने के अधिकार पर भी आपत्ति की गई है लेकिन सभापीठ द्वारा उस अधिकार को बनाए रखा गया है।[231]

जहां तक ऐसे मंत्री का संबंध है जोकि सभा का सदस्य नहीं है, अनेकों बार ऐसे मंत्री द्वारा राज्य सभा में औचित्य प्रश्न उठाये जाने अथवा उसके संबंध में बोलने पर आपत्ति की गई है और सभापीठ ने व्यवस्था दी है कि ऐसे मंत्री को औचित्य प्रश्न उठाने अथवा पहले ही किसी सदस्य द्वारा उठाए गये औचित्य प्रश्न के संबंध में बोलने का अधिकार है।

> एक मंत्री (जोकि इस सभा का सदस्य नहीं था) जोकि एक विधेयक के संबंध में उठाए गये औचित्य प्रश्न पर बोल रहा था, से इस आधार पर आपत्ति की गई थी कि औचित्य प्रश्न विशुद्ध रूप से सभा के अधिकारों और विशेषाधिकारों से संबंधित है और उसके संबंध में केवल सभा के सदस्य ही बोल सकते हैं। सभापति

महोदय ने उसके विरुद्ध व्यवस्था दी थी, उन्होंने टिप्पणी की थी कि: ''सभी मंत्री किसी भी सभा में बोलने का अधिकार रखते हैं।''[232]

जब एक मंत्री, जोकि दूसरी सभा का सदस्य था, औचित्य प्रश्न उठाना चाहता था, तब एक सदस्य द्वारा आपत्ति की गई थी कि वह (मंत्री) नियम 258 के अनुसार ऐसा नहीं कर सकते क्योंकि वह इस सभा का सदस्य नहीं है। सभापति ने उस नियम और नियम 2 का उल्लेख करते हुए यह टिप्पणी की थी:

> ''...संविधान में एक महत्वपूर्ण विधि दी गई है। अनुच्छेद 88 में यह कहा गया है, ''प्रत्येक मंत्री और भारत के महान्यायवादी को यह अधिकार होगा कि वह सदन...आदि में बोले और उसकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग ले।'' इस बात का संबंध ''उसकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग ले'' से है। क्या ''कार्यवाहियों में अन्यथा भाग ले'' का आशय यह है कि वह किसी अन्य सदस्य की तरह कार्यवाहियों में भाग लेगा? या नियमों की सीमा से बाहर निकलकर? यहां हम इस सिद्धान्त का अनुसरण करते हैं, कि सभापति पूर्वनिर्णयों को ध्यान में रखे। मुझे बताया गया है कि एक बार पूर्ववर्ती सभापति ने यह विनिर्णय दिया था कि जिस समय माननीय मंत्री सदन में हो उस समय उसे औचित्य प्रश्न उठाने का हक होगा। मेरे विचार से इस सदन में एक बार जो निर्णय लिया जा चुका है, उससे हटना गलत होगा।[233]

जब एक मंत्री ने औचित्य प्रश्न उठाया तो एक सदस्य ने यह आपत्ति की कि संबंधित मंत्री को ऐसा करने का कोई अधिकार प्राप्त नहीं है; एक मंत्री होने के नाते वह सदन में उपस्थित हो सकते हैं। अन्यथा वह सदन के लिए बाहरी व्यक्ति हैं और औचित्य प्रश्न उठाने का अधिकार तभी प्राप्त होता है जब वह व्यक्ति सदन का सदस्य हो, किसी अन्य स्थिति में इसकी अनुमति नहीं दी जा सकती है। इस पर उपसभापति ने यह विनिर्णय दिया था कि—

> वह (अर्थात् मंत्री) कार्यवाहियों में भाग ले सकते हैं। यह प्रक्रिया का मामला है। इस संबंध में संविधान में एक उपबंध है कि वह कार्यवाहियों में भाग ले सकते हैं और उस आधार पर वह औचित्य प्रश्न भी उठा सकते हैं।[234]

औचित्य प्रश्न क्या नहीं होता या औचित्य प्रश्न किस समय नहीं उठाया जाना चाहिये

उपर्युक्त नियम में उन परिस्थितियों की परिकल्पना अथवा उल्लेख नहीं किया गया है जिनमें किसी सदस्य द्वारा औचित्य प्रश्न उठाये जा सकते हैं अथवा नहीं और नियम में स्पष्ट रूप से यह परिभाषित भी नहीं किया गया है कि कौन-सा औचित्य प्रश्न है और कौन-सा नहीं। उन सभी परिस्थितियों को भी स्पष्ट करना संभव नहीं है जिनमें सभापीठ द्वारा किसी औचित्य प्रश्न को स्वीकार करने अथवा अस्वीकार करने का विनिर्णय दिया जा सकता है। तथापि, राज्य सभा, लोक सभा या अन्यत्र विभिन्न पीठासीन अधिकारियों द्वारा दिए गये विनिर्णयों और पूर्व निर्णयों के आधार पर कुछ ऐसी परिस्थितियां दी जा सकती हैं जिनमें कोई प्रश्न निश्चित रूप से औचित्य प्रश्न नहीं होता है या जिनमें कोई औचित्य प्रश्न नहीं उठाया जा सकता है। उनमें से कुछ का वर्णन नीचे किया गया है।

जो कार्य सदन के समक्ष न हो उसके बारे में औचित्य प्रश्न नहीं होता है

कोई सदस्य ऐसे कार्य के बारे में औचित्य प्रश्न नहीं उठा सकता है जो सदन के समक्ष न हो। कार्यवाही के संचालन और किए जाने वाले कार्य के संबंध में ही औचित्य प्रश्न उठाया जा सकता है। औचित्य प्रश्न उस कार्य के संबंध में होना चाहिये जो सदन के समक्ष हो।[235]

> एक विधेयक पर चर्चा के दौरान एक सदस्य ने प्रश्नों के समय के दौरान मंत्री महोदय से पूछे गये एक प्रश्न के संबंध में एक औचित्य प्रश्न उठाना चाहा। उपसभापति ने यह कहकर उसे अस्वीकार कर दिया कि सदस्य ऐसी घटना पर कोई औचित्य प्रश्न नहीं उठा सकता जो उसी दिन घटित हुई हो; वह चालू वाद-विवाद के संबंध में औचित्य का प्रश्न उठा सकता है और सदस्य को चाहे कोई भी प्रश्न क्यों न पूछना हो उसे वह अगले दिन प्रश्न-काल के पश्चात् पूछ सकता है या वह सदस्य संबंधित मंत्री को पत्र लिख सकता है।[236]

किसी औचित्य प्रश्न के संबंध में कोई औचित्य प्रश्न नहीं पूछा जाएगा

जब एक सदस्य अपना औचित्य प्रश्न उठा रहा था तब एक अन्य सदस्य ने एक औचित्य प्रश्न उठाना चाहा। यद्यपि सभापति ने उसे ऐसा करने की अनुमति प्रदान नहीं की थी फिर भी उस सदस्य ने सभापीठ पर अपनी बात सुनने के लिए दबाव डाला क्योंकि उसकी अपनी राय में उसका औचित्य प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण था। दूसरे सदस्य के औचित्य प्रश्न को नामंजूर करते हुए उपसभापति ने टिप्पणी की, ''यह संसदीय प्रथा नहीं है। जब एक औचित्य प्रश्न उठाया गया हो तब आप दूसरा औचित्य प्रश्न नहीं उठा सकते। औचित्य प्रश्न पर औचित्य प्रश्न नहीं होता है।''[237]

सभापति के विचाराधीन किसी मामले के संबंध में किसी औचित्य प्रश्न का न पूछा जाना

जब एक सदस्य ने किसी ऐसे मामले के संबंध में औचित्य प्रश्न उठाना चाहा जिसके बारे में उसने सभापति को लिखा था तब उपसभापति ने यह टिप्पणी की कि चूंकि यह मामला अब सभापति के विचाराधीन है इसलिये, सदस्य द्वारा उठाए गये औचित्य प्रश्न पर आगे कार्यवाही जारी रखने की कोई आवश्यकता नहीं है।[238]

मंत्री की टिप्पणी पर प्रश्न पूछने के लिये किसी औचित्य प्रश्न का न उठाया जाना

जब एक सदस्य ने कलकत्ता शहर के संबंध में प्रधान मंत्री द्वारा की गई कुछेक टिप्पणियों के संबंध में औचित्य प्रश्न उठाना चाहा तब उपसभापति ने यह टिप्पणी की कि मंत्री कोई भी उत्तर दे सकता है चाहे सदस्य उससे सहमत हो या नहीं। इस पर प्रश्न नहीं पूछा जा सकता।[239]

प्रश्न-काल तथा आधे घंटे की चर्चा के दौरान

यह अब एक सुस्थापित प्रथा है कि प्रश्न-काल के दौरान कोई औचित्य प्रश्न नहीं पूछा जा सकता है। संभवत: ऐसा इसलिए है ''क्योंकि सामान्य इच्छा यही होती है कि प्रश्नों के लिए उपलब्ध सीमित समय के दौरान अधिकाधिक कार्य किया जा सके''। राज्य सभा में पीठासीन अधिकारी जब तक कि वह प्रश्न असाधारण न हो, प्रश्न-काल के दौरान औचित्य प्रश्नों को उठाए जाने की अनुमति देने से निरन्तर इनकार करते रहे हैं।[240]

तथापि, ऐसे कतिपय उद्धरण भी हैं जब असाधारण बात को ध्यान में रखते हुए अपवाद स्वरूप इस प्रथा का त्याग भी किया गया है जैसाकि प्रश्नों से संबंधित अध्याय में बताया गया है।

इसी कारण आधे घंटे की चर्चा के दौरान भी औचित्य प्रश्न नहीं उठाया जा सकता।[241]

विभाजन के दौरान

जब पीठासीन अधिकारी किसी प्रस्ताव पर मत लेने के दौरान अथवा प्रस्ताव पर मत लेने के पश्चात् मत-विभाजन के दौरान मत संग्रहीत करने में व्यस्त होता है तब वह औचित्य प्रश्न नहीं सुनेंगे; क्योंकि यदि वह ऐसा करते हैं तो मत-विभाजन और किसी प्रस्ताव के संबंध में अनुवर्ती मत-निर्धारण में कई घंटों का समय लग सकता है।[242]

प्रक्रिया के संबंध में परामर्श का अनुरोध

अनेक अवसरों पर जब सदस्य स्थिति को असंतोषजनक मानते हैं तब वे सभापीठ से यह परामर्श देने का अनुरोध करते हैं कि इसके निराकरण के लिए प्रक्रिया संबंधी समाधान क्या है। सामान्यत: यह परामर्श औचित्य प्रश्न के माध्यम से मांगा जाता है। ऐसे मामलों में सभापीठ सदस्य को टोकते हुए यह बताती है कि उसे कोई भी परामर्श औचित्य प्रश्न के माध्यम से नहीं मांगना चाहिए।

अन्य अवसर अथवा स्थितियां

(1) औचित्य प्रश्न विशेषाधिकार का प्रश्न नहीं होता है।[243]

(2) सदस्य औचित्य प्रश्न को निम्नलिखित के लिए नहीं उठाएगा:

(क) सूचना मांगने के लिए; या

(ख) अपनी स्थिति स्पष्ट करने के लिए; या

(ग) जब किसी प्रस्ताव के संबंध में कोई प्रश्न सदन में पूछा गया हो; या

(घ) जोकि परिकल्पनात्मक हो; या

(ङ) विभाजन की घंटी न बज पाने या सुनायी न देने पर।[244]

(3) कार्यावलि की किसी मद के निपटारे के पश्चात् उस मद के संबंध में कोई औचित्य प्रश्न नहीं उठाया जा सकता। दूसरे शब्दों में बिना किसी बात के कोई औचित्य प्रश्न नहीं उठाया जा सकता।

(4) किसी सदस्य की निरर्हता से संबंधित मंत्रियों अथवा सदस्यों द्वारा दिए गए कथित परस्पर विरोधी वक्तव्यों के संबंध में कोई औचित्य प्रश्न नहीं उठाया जा सकता।

(5) औचित्य प्रश्न में प्रक्रिया का संदर्भ दिया जाना चाहिए न कि किसी प्रस्ताव आदि से संबंधित ठोस तर्कों का।

(6) किसी सदस्य द्वारा एक ही विषय के संबंध में एक बार से अधिक औचित्य प्रश्न नहीं उठाए जा सकते।

(7) जब सभापति सदन के समक्ष कोई प्रस्ताव प्रस्तुत कर रहा हो या अपना विनिर्णय सुना रहा हो या टिप्पणी कर रहा हो या कुछ बोल रहा हो, उस वक्त कोई औचित्य प्रश्न नहीं उठाया जा सकता।

(8) ऐसे मामलों को औचित्य प्रश्न का विषय नहीं बनाया जाना चाहिए जिनमें सभापीठ द्वारा राहत प्रदान नहीं की जा सकती।

(9) उन औचित्य प्रश्नों को पुन: नहीं उठाया जा सकता, जिन पर पहले निर्णय हो चुका है।

(10) किसी विधेयक या संकल्प के संबंध में कोई औचित्य प्रश्न तब तक नहीं उठाया जा सकता जब तक कि कार्यावलि में दर्ज उस विधेयक या संकल्प से संबंधित प्रस्ताव को सदन के समक्ष प्रस्तुत नहीं कर दिया जाता। इसी प्रकार से, किसी संकल्प या प्रस्ताव की ग्राह्यता या ऐसे आग्रह को कि किसी प्रस्ताव या संकल्प को प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं दी जाए, उससे संबंधित औचित्य प्रश्न को, ऐसे किसी प्रस्ताव या संकल्प के प्रस्तुत किये जाने तथा सदन के समक्ष रख दिये जाने के पश्चात् ही, उठाया जा सकता है।

(11) इस तथ्य का अभिनिर्धारण कि कोई प्रश्न औचित्य प्रश्न है या नहीं यह इस बात पर निर्भर नहीं करता कि क्या सभापीठ उसके संबंध में किसी प्रकार की राहत प्रदान कर सकती है या नहीं अपितु इस बात पर निर्भर करता है कि इसमें नियमों, निर्देशों और संविधान के विभिन्न उपबंधों की ऐसी व्यवस्था अंतर्ग्रस्त है या नहीं जो सदन की कार्यवाही को विनियमित करती है और इसमें ऐसी बात उठाई गई है या नहीं जिसका विनिर्णय केवल सभापीठ ही कर सकती है।

(12) सभापीठ ऐसे किसी औचित्य प्रश्न पर अपनी व्यवस्था नहीं दे सकती है जिसमें यह प्रश्न उठाया गया है कि क्या कोई विधेयक संवैधानिक रूप से सदन की विधायी सक्षमता के दायरे में आता है या नहीं अथवा किसी प्रस्ताव/संकल्प से संबंधित चर्चा के अंतर्गत किसी उद्घोषणा/समझौते/संधि की संवैधानिकता है या नहीं। ऐसे मामलों पर निर्णय लेने की जिम्मेदारी सभा की है।

(13) कार्य को क्रमबद्ध करने से संबंधित किसी औचित्य प्रश्न में उस दिन के लिये कार्यावलि में पहले ही से दर्ज मदों के क्रम का उल्लेख होना चाहिये। इसे किसी ऐसे नए मद को अंतर्विष्ट करने के लिये नहीं उठाया जा सकता जोकि कार्यावलि में दर्ज नहीं हो।

(14) किसी पूर्व बैठक की कार्यवाही से संबंधित कोई औचित्य प्रश्न नहीं उठाया जा सकता है।

(15) सभापीठ द्वारा दी गई व्यवस्थाओं के संबंध में कोई औचित्य प्रश्न नहीं उठाया जा सकता।[245]

उन स्थितियों, जब औचित्य प्रश्न उठाए जाने चाहिये या जब औचित्य के प्रश्न उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, की उपर्युक्त सूची औचित्य प्रश्न की धारणा के संबंध में केवल निदर्शी है। कोई भी नियम या व्यवस्था, चाहे वह कितना ही व्यापक हो, सम्भवतया काल्पनिक औचित्य प्रश्नों को उठाए जाने की बात को रद्द नहीं कर सकता है या ऐसे अनुचित औचित्य प्रश्नों को उठाने से नहीं रोक सकता है जिससे कि बाद में स्थिति अव्यवस्था में बदल सकती है। सदन में अधिक तनाव या विवादों के समय औचित्य प्रश्न बंट जाते हैं। ऐसी स्थिति में औचित्य प्रश्न सभापीठ के लिये अत्यधिक परेशानीजनक समस्याएं खड़ी करते हैं।

सामान्यतया जब सदस्य औचित्य प्रश्न उठाते हैं तो सभापीठ को तब तक इस बात का कोई आभास नहीं होता है कि सदस्य क्या कहने जा रहे हैं जब तक कि वे अपनी बात कह नहीं लेते हैं। अनेक मामलों में उठाया गया प्रश्न बिल्कुल भी औचित्य प्रश्न न होकर या तो चर्चा के मुद्दे में बाधा डालने या सदन की कार्यवाही में विलम्ब करने का प्रयास मात्र होता है।[246] वास्तव में ऐसी स्थिति आ सकती है जब सभापीठ को इस बात पर विचार करना पड़े कि किसी विशेष अवसर पर औचित्य प्रश्नों की भरमार की ऐसी स्थिति आ जाए तब सभापीठ के लिये यह कहना औचित्यपूर्ण हो जाता है कि वह और कोई औचित्य प्रश्न नहीं सुनेंगे।

आधिकारिक कार्यवाहियों का विवरण तैयार करना

महासचिव द्वारा राज्य सभा की प्रत्येक बैठक की कार्यवाही का पूरा विवरण तैयार करवाया जाता है और उसे यथासाध्य ऐसे रूप में तथा ऐसी रीति से प्रकाशित करवाया जाता है जैसा सभापति समय-समय पर निर्देश दें।[247]

कार्यवाही का वृत्तलेखन

कतिपय ऐसे शब्दों, पदावलियों और अभिव्यक्तियों को छोड़कर, यदि कोई हों, जो सदस्यों द्वारा सभापीठ की अनुमति के बिना कही गई हों और सभापीठ द्वारा उन्हें सदन की कार्यवाही से निकालने या अभिलेखीकृत न करने का आदेश दिया गया हो। सदन में कही गई प्रत्येक बात का शब्दशः अभिलेख आधिकारिक वृत्तलेखकों द्वारा किया जाता है।

राज्य सभा की दिन-प्रतिदिन की कार्यवाहियों के शब्दशः अभिलेख को तैयार करने संबंधी कार्य सचिवालय में वृत्तलेखन सेवा के निदेशक के अधीन कार्य कर रहे अंग्रेजी और हिन्दी के वृत्तलेखकों द्वारा

किया जाता है। वृत्तलेखकों द्वारा आशुलिपि में लिखी गई टिप्पणियों को तुरन्त इलैक्ट्रॉनिक टाइपराइटर द्वारा टाइप किया जाता है ताकि वाद-विवाद की प्रतियां उस दिन की कार्यवाही समाप्ति पर सदन के उठने के कुछ घंटे के भीतर ही उपलब्ध हो जाएं सिवाए उन दिनों के जब सदन की बैठक असामान्य रूप से अधिक समय तक चलती है। इस स्थिति में कार्यवाही के बाद के भाग को अगले दिन अनुपूरक अंक के रूप में जारी किया जाता है। वाद-विवाद की प्रतियों को सामान्यतया दो भागों में जारी किया जाता है: भाग-I जिसमें तारांकित तथा अतारांकित प्रश्न और उनके उत्तर होते हैं तथा भाग-II जिसमें प्रश्नों के अलावा बाकी कार्यवाही होती है, ।

अंग्रेजी तथा हिन्दी/उर्दू में हुई कार्यवाहियों का वृत्तलेखन वृत्तलेखकों द्वारा किया जाता है जोकि सदन में बैठते हैं। कुछ क्षेत्रीय भाषाओं में दिए गए भाषणों को साथ-साथ अंग्रेजी तथा हिन्दी में भाषान्तरित करने की व्यवस्था है और ऐसे मामलों में भाषान्तरकारों द्वारा किए गए पाठ का उल्लेख वाद-विवाद में पाद-टिप्पणी के साथ होता है जिसमें सदन में दिए गए मूल भाषण की भाषा का उल्लेख होता है। स्थापित परिपाटी के अनुसार अंग्रेजी और हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भाषा में बोलने के इच्छुक सदस्य सभापीठ को एक घंटे की पूर्व सूचना पर ऐसा कर सकते हैं।

जब तैयार किए गए भाषण या वक्तव्य मंत्रियों या सदस्यों द्वारा पढ़े जाते हैं और जब भाषणों को विस्तृत टिप्पणों की सहायता से दिया जाता है तो सही प्रतिलेख के लिए भाषण समाप्त होने पर इन तैयार भाषणों, विवरणों, टिप्पणों इत्यादि को वृत्तलेखकों को सौंप दिया जाता है।[248]

सदन में पूरी कार्यवाही की साथ-साथ टेप रिकॉर्डिंग के लिए व्यवस्था विद्यमान है। इससे वृत्तलेखकों को सही प्रतिलेखन में सहायता मिलती है तथा संदेह होने पर उनके द्वारा लिखित कार्यवाहियों की परिशुद्धता की भी इससे पुष्टि होती है।

वृत्तलेखकों की प्रति को कार्यवाही का प्रामाणिक अभिलेख माना जाता है। यदि वृत्तलेखकों द्वारा अभिलिखित कार्यवाही की परिशुद्धता के संबंध में कोई विवाद उठता है तो टेप रिकॉर्ड किए गए रूपान्तर से इनकी जांच की जा सकती है।

> एक पूर्व अवसर पर यह विवाद उठने पर कि सदस्य ने जो कुछ कहा था वह संसदीय था या असंसदीय, इसका पता करने के लिए वृत्तलेखक से उनकी कॉपी से वाद-विवाद का संबद्ध भाग पढ़ने के लिए कहा गया था।[249]

किसी सदस्य द्वारा किसी दिन दिए गये प्रत्येक भाषण अथवा पूछे गए प्रत्येक प्रश्न की, जिस रूप में उसे शासकीय रिपोर्टरों ने नोट किया है, इलैक्ट्रोस्टेट की हुई एक प्रति संबंधित सदस्य के पास पुष्टि के लिए साधारणत: अगले दिन प्रात:काल भेजी जाती है। उसे सम्यक् रूप से अनुमोदित करके चौबीस घंटे के अन्दर और किसी भी अवस्था में तीसरे दिन दोपहर 12 बजे तक सम्पादक (अंग्रेजी) को भेज देना चाहिए। ऊपर निर्दिष्ट समय के पश्चात् प्राप्त होने वाली शुद्धियों को प्रेस में छपने के लिए भेजी जाने वाली पांडुलिपियों में सम्मिलित नहीं किया जा सकता। सदस्य द्वारा अनुमोदित प्रति की प्राप्ति में विलम्ब होने की दशा में रिपोर्टर द्वारा दिए गये विवरण को ही इस्तेमाल कर लिया जाता है।

यदि उद्धरण दिये जायें तो उद्धरण की प्रतियां रिपोर्टर को अवश्य ही उपलब्ध की जानी चाहिए, केवल उन मामलों को छोड़कर जिनमें किसी प्रसिद्ध रिपोर्ट के, जो आसानी से उपलब्ध हैं, पृष्ठ आदि का स्पष्ट निर्देश कर दिया गया है।

यदि किसी भारतीय भाषा में उद्धरण, श्लोक आदि दिये गये हों तो सदस्य को चाहिए कि अपने भाषण की प्रति अनुमोदन के लिए प्राप्त होने पर उसमें उद्धरण दर्ज कर दें और उसका अर्थ पहले न दिया हो तो उक्त उद्धरण के बाद उसका अर्थ भी लिख दें।

अधिकारीय प्रतिवेदन में सदस्यों के भाषण बिल्कुल उसी रूप में प्रकाशित होने चाहिए जिस रूप में वे सभा में दिये गये हों, और भाषण की प्रतियां उनके पास केवल इसलिए भेजी जाती हैं कि वे उनकी पुष्टि कर दें और स्पष्ट अशुद्धियां रह गयी हों तो उन्हें ठीक कर दें। इन प्रतियों को भेजने का प्रयोजन यह नहीं है कि उनका साहित्यिक रूप सुधारा जाए अथवा उनमें कोई अंश जोड़कर अथवा उनमें से कोई अंश हटाकर उसके सार-रूप में परिवर्तन किया जाए। इन भाषणों में केवल मामूली अशुद्धियां, उदाहरणार्थ, व्याकरण संबंधी त्रुटियां गलत रूप से दिये गये उद्धरण, आंकड़ों, नाम आदि को ठीक किया जा सकता है। यदि सदस्यों द्वारा कोई शुद्धियां, की जायें तो वे स्याही से साफ तथा पढ़े जा सकने वाले अक्षरों में की जानी चाहिए ताकि उन्हें मुद्रित होने वाले प्रतिवेदन में ठीक-ठीक सम्मिलित किया जा सके।[250]

अधिकारीय प्रतिवेदन में कही गई बातों का अभिलेख होता है। अत: इसमें वर्णनात्मक अभिलेखन नहीं किया जाता है। उदाहरणार्थ, क्रुद्ध भाव-भंगिमा, जोरदार प्रशंसा अथवा व्यंग्यात्मक हंसी को अधिकारीय प्रतिवेदन में नहीं दर्शाया जाता है जब तक कि किसी सदस्य द्वारा उनका संदर्भ न दिया जाए। निधन संबंधी उल्लेख के अंत में सदस्यों द्वारा मौन धारण करने और बहिर्गमन को ही सामान्य रूप से दर्शाया जाता है।

समितियों की कार्यवाहियों का अभिलेखन

जब किसी साक्षी को साक्ष्य देने के लिए बुलाया जाता है तो संसदीय समिति की कार्यवाहियों का शब्दश: अभिलेख रखा जाता है।[251] इस प्रकार की कार्यवाही के प्रासंगिक भाग को अभिपुष्टि हेतु साक्षी और संबद्ध सदस्यों को भेजा जाता है जिन्हें विनिर्दिष्ट तिथि के भीतर वापस करना होता है। शब्दश: कार्यवाहियों को गोपनीय रखा जाता है और अध्यक्ष की अनुमति के बिना उसे किसी को भी उपलब्ध नहीं करवाया जा सकता है। कार्यवाहियों को अभिपुष्टि हेतु जिन साक्षियों के पास भेजा जाता है उन्हें यह सूचना दी जाती है कि कार्यवाहियां गोपनीय रखी जाएं और वे इसके किसी भी अंश को प्रकाशित न करें। जहां तक समिति की अन्य कार्यवाहियों का संबंध है, समिति के निर्णयों को कार्यवृत्त के रूप में अनुरक्षित किया जाता है।[252]

राज्य सभा की कार्यवाही से शब्दों का निकाला जाना

यदि सभापति की यह राय हो कि वाद-विवाद में किसी ऐसे शब्द या शब्दों को प्रयुक्त किया गया है, जो मानहानिकारक या अशिष्ट अथवा असंसदीय या अशोभनीय हैं, तो वह स्वविवेक से आदेश दे सकेगा कि ऐसे शब्द या शब्दों को सदन की कार्यवाही में से निकाल दिया जाये।[253] व्यवहार में इस शक्ति का विस्तार कर दिया गया है और कुछ मामलों में सभापति ने स्वविवेक से ऐसे शब्दों को कार्यवाही में से निकालने का आदेश दिया है जिन्हें वह राष्ट्रीय हित के अथवा किसी विदेशी राज्य के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध बनाए रखने के प्रतिकूल समझे, जो विदेशी मित्र-राज्यों के राज्याध्यक्षों सहित उच्च पदाधिकारियों के प्रति अपमानजनक हो;[254] राष्ट्रीय भावनाओं अथवा समाज के किसी वर्ग की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाते हों; जिनसे सेना की प्रतिष्ठा घटने की संभावना हो; अच्छे आशय के न हों अथवा अन्यथा आपत्तिजनक हों और जिनसे सदन की अपकीर्ति की सम्भावना हो। सदन की कार्यवाही से निम्नलिखित अवस्थाओं में शब्दों को निकालने का आदेश स्वत: सभापति द्वारा दिया जा सकता है:

(1) यदि वह यह समझे कि कतिपय शब्द मानहानिकारक, अशिष्ट, असंसदीय अथवा अशोभनीय हैं;

(2) किसी सदस्य अथवा मंत्री द्वारा आपत्तिजनक शब्दों को, उन्हें उच्चारित करते समय अथवा बाद में सभापति के ध्यान में लाया जाये और सभापति उससे सहमत हो;

(3) जब सचिवालय के किसी अधिकारी द्वारा अथवा अन्यथा आपत्तिजनक शब्दों की ओर सभापति का ध्यान आकृष्ट किया जाये और सभापति इस बात से सहमत हो;

(4) जब कभी कोई सदस्य यह अनुरोध करे कि उसके भाषण से कतिपय शब्दों को निकाल दिया जाए और सभापति इस बात से सहमत हो;

एक सदस्य ने सभापति से अनुरोध किया कि उसके उस अनुपूरक प्रश्न को कार्यवाही से निकाल दिया जाए जिसे उसने गलतफहमी से पूछ लिया था। सभापति ने यह कहते हुए सहमति नहीं दी कि सदस्य द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण रिकॉर्ड में चला जाएगा।[255]

(5) यदि सदस्यों द्वारा एक दूसरे के विरुद्ध अपमानजनक टिप्पणियां की गई हों;

एक बहस के दौरान कुछ सदस्यों के बीच कुछ कहा-सुनी हो गई। एक सदस्य ने दूसरे सदस्य द्वारा की गई कतिपय टिप्पणियों को वापस लेने की मांग करते हुए व्यवस्था का प्रश्न उठाया। उस दिन सभा को स्थगित करने से पूर्व उपसभापति ने अन्य बातों के साथ-साथ यह कहा कि उन्होंने रिकॉर्ड देख लिया था और उन टिप्पणियों को हटा दिया जायेगा।[256]

(6) जब कोई सदस्य अपने शब्दों को वापस ले लेता है।

एक सदस्य ने कोई टिप्पणी की जिसे उसने सभापति के निर्देश देने पर वापस ले लिया। यद्यपि असंशोधित कार्यवाही में वे शब्द शामिल नहीं हैं परन्तु उसका यह वक्तव्य कि उसने उन शब्दों को वापस ले लिये हैं कार्यवाही में शामिल कर लिया गया है, तो उस सदस्य ने अगले दिन इस मामले को सभा में उठाया और यह तर्क दिया कि ''वापस लिया गया'' और ''निकाल दिया गया'' शब्दों के बीच अन्तर है और कहा कि जब उसने सभापीठ की आज्ञा का पालन किया और उन शब्दों को वापस ले लिया तो उन्हें कार्यवाही से निकाला नहीं जा सकता था। सभापति ने अन्य बातों के साथ-साथ कहा कि ''टिप्पणियों को कार्यवाही से निकालने का अधिकार मेरा विवेकाधिकार है और यह उन मामलों तक ही सीमित नहीं है जबकि कोई माननीय सदस्य मेरे निर्देशों का उल्लंघन करता है। किसी टिप्पणी को वापस लिया जा सकता है, और उसके बावजूद इसका स्वरूप ऐसा हो सकता है कि यह नियम 261 के अधीन दी गई मेरी शक्तियों के अन्तर्गत आता हो।''[257]

जब कोई सदस्य बोलने के लिए न बुलाए जाने पर भी बोलता है अथवा अपना स्थान ग्रहण किए जाने के लिए कहे जाने के बावजूद बोलता रहता है अथवा सभापीठ की अनुमति के बिना बोलता है तो सभापति यह निर्देश दे सकता है कि ऐसे सदस्य की टिप्पणियां रिकॉर्ड पर न जाएं।[258] इसी प्रकार, यदि कोई सदस्य किसी अन्य सदस्य अथवा मंत्री के भाषण के बीच व्यवधान करना जारी रखता है तो सभापीठ यह निर्देश दे सकता है कि व्यवधान को अभिलिखित न किया जाए।[259]

जब किसी सदस्य ने सभापीठ की अवज्ञा करके बोलना चाहा तो सभापति ने आदेश दिया कि सदस्य ने जो कुछ भी कहा है वह ''रिकॉर्ड में नहीं जाएगा''। व्यवस्था सम्बंधी एक प्रश्न उठाया गया कि सभापति को ऐसा आदेश देने की कोई शक्ति प्राप्त नहीं है कि कार्यवाही का कोई अंश रिकॉर्ड पर न जाए। परंतु सभापीठ ने निर्णय दिया कि उन्हें नियम 259 (व्यवस्था बनाए रखने और निर्णयों का प्रवर्तन करने हेतु सभापति की शक्ति के संबंध में) के अधीन यह शक्ति प्राप्त है।[260]

एक बार जब कुछ सदस्य एक साथ अनुपूरक प्रश्न पूछने के लिए उठ खड़े हुए और उन्होंने औचित्य का प्रश्न उठाया तथा सभापति द्वारा बैठने के लिए कहने के बावजूद अपना स्थान पुन: ग्रहण नहीं किया, तब खड़े होकर उन्होंने यह टिप्पणी की : ''जब मैं खड़ा हूं और कोई माननीय सदस्य बोल रहा हो, तो मेरा वृत्तलेखकों को यह अनुदेश है कि वह जो कुछ कहें, उसे बिल्कुल अभिलिखित न किया जाए। यह स्थायी अनुदेश है।''[261] कुछ दिनों के बाद एक सदस्य ने सभापति से इस तथ्य को दृष्टि में रखते हुए अपने विनिर्णय पर पुनर्विचार करने का अनुरोध किया कि नियम यह नहीं कहते कि जब सभापति महोदय खड़े हों और तब कोई सदस्य कुछ कहे, तो उसकी बात स्वत: ही अभिलेख से बाहर हो जाती है। तत्पश्चात् सभापति ने स्पष्ट किया कि उनकी यह बात उसी दिन के लिए थी और हर अवसर पर वह विशेष निदेश देंगे।[262]

सभापति जब पीठासीन हो, केवल तभी नहीं अपितु वह बाद के किसी भी दिन को कही गई बात को कार्यवाही से बाहर निकालने के आदेश दे सकता है।

> एक सदस्य ने अपनी उस आपत्तिजनक टिप्पणी को वापस ले लिया, जो उसने तब की थी जब सभापति महोदय पीठासीन थे। इसके बाद उन्होंने उपसभाध्यक्ष को कार्यवाही में से टिप्पणियों को बाहर निकालने का आदेश दिया। अगले दिन सदस्य ने अन्य बातों के साथ-साथ यह दावा करते हुए सदन में मामला उठाया कि सभापति कार्यवाही में से कथनों को बाहर निकालने के ऐसे आदेश अपने चैम्बर से नहीं दे सकते; वह सभापीठ पर आसीन होने पर ही ऐसा कर सकते हैं। सभापति ने टिप्पणी की कि सभापति ऐसा कर सकते हैं और इसमें स्थान की कोई बात नहीं है; यह आवश्यक नहीं है कि उन्हें सदन की कार्यवाही में से किसी कथन को बाहर निकालने का निदेश देने के लिए सदन में सभापीठ पर विद्यमान होना चाहिए।[263]

> 21 और 25 जुलाई, 1989 को भारत के नियंत्रक और महालेखापरीक्षक के प्रतिवेदन पर हुई अल्पकालिक चर्चा के दौरान उनके विरुद्ध की गई कुछ आपत्तिजनक टिप्पणियों को राज्य सभा के एक भूतपूर्व सदस्य द्वारा किए गए अभ्यावेदन पर सभापति ने 151वें सत्र (18 अगस्त, 1989) के आखिरी दिन सदन की कार्यवाही से निकालने के आदेश दिए थे। सदस्यों को टिप्पणियों को कार्यवाही से निकालने की सूचना संसदीय समाचार में प्रकाशित पैरा के माध्यम से दी गई।[264]

> एक सदस्य द्वारा 30 अप्रैल, 1992 को लोक सभा सचिवालय के संबंध में की गई कतिपय टिप्पणियों को, जिन पर तब ध्यान नहीं गया था, बाद में सदन की कार्यवाही से निकाला गया और तद्नुसार संबंधित सदस्य को सूचित किया गया।[265]

पीठासीन अधिकारी का शब्दों को कार्यवाही से बाहर निकालने के बारे में निर्णय या यह निदेश कि कुछ भी अभिलिखित नहीं किया जाएगा, अंतिम होता है और इस संबंध में सभापति के समक्ष कोई अपील नहीं की जा सकती।

> प्रश्नकाल के तुरंत बाद एक सदस्य ने एक उपसभाध्यक्ष द्वारा पहले दिए गए निदेश के संदर्भ में सभापीठ के यह कहने कि ''कार्यवाही में कुछ भी शामिल नहीं किया जाएगा'' के अधिकार पर प्रश्न-चिह्न लगाया और उसने आगे कहा कि जब तक नियमों का उल्लंघन नहीं होता और संविधान की अवमानना नहीं होती, तब तक वह ऐसी बात नहीं कह सकते। उन्होंने उपसभाध्यक्ष द्वारा इस प्रकार से निकाली जा रही कुछ कार्यवाहियों के संबंध में आपत्ति प्रकट की। इसके उत्तर में सभापति ने टिप्पणी की कि:
>
> > ''मैं निश्चित रूप से सभापीठ पर मौजूद उपसभाध्यक्ष द्वारा दिए गए विनिर्णय का समर्थन करता हूं। यह विनिर्णय मेरे द्वारा किए गए निर्णय के समान हैं। यदि मैं उन विनिर्णयों की समीक्षा करना शुरू कर दूं, तो कार्य कभी भी समाप्त नहीं होगा और काफी मुश्किलें भी पैदा हो जाएंगी।''[266]

एक से अधिक अवसर पर सभापीठ द्वारा दिए गए इस निदेश के संबंध में कि अभिलेख में कुछ भी शामिल नहीं किया जाएगा, सदन में मामला उठाया गया है। उदाहरण के लिए 6 अगस्त, 1980 को इस मुद्दे पर लम्बी बहस हुई। एक सदस्य ने यह तर्क किया कि नियम 260 के अधीन महासचिव को कार्यवाही का पूरा ब्यौरा तैयार करवाना होता है। इस संबंध में कोई विशिष्ट नियम नहीं है कि ''सभापति निदेश दे कि कुछ भी अभिलेख में शामिल नहीं किया जाएगा।'' उपसभापति ने टिप्पणी की कि नियम 266 (अवशिष्ट शक्ति) के अधीन सभापीठ को सदन की कार्यवाहियों को विनियमित करने की शक्ति प्राप्त है।[267]

27 अगस्त, 1988 को पुन: प्रश्नकाल के दौरान जब सभापति ने यह विनिर्णय दिया कि अनुपूरक प्रश्नों के अतिरिक्त, जो बातें सभा में कही गई हैं, उनमें से किसी भी बात को अभिलेख में शामिल नहीं किया

जाएगा, तब इस पर सदस्यों ने अभिलेख से सदस्यों की अभिव्यक्तियों को हटाने पर आपत्ति की थी। सभापति का कहना था:

> ''यह एक सुस्थापित परंपरा है। अन्यथा आपको उतने वृत्तलेखकों की आवश्यकता पड़ेगी जितने यहां सदस्य हैं...मेरा विनिर्णय बिल्कुल स्पष्ट है कि जो बात कही गई है, उसमें से कुछ भी अभिलेख में शामिल नहीं किया जाएगा। जो अभिलेख में है, उसे नहीं निकाला जाएगा।''[268]

नियम समिति ने भी इस मुद्दे पर विचार किया। राज्य सभा के सभापति, जो समिति के अध्यक्ष भी हैं, ने स्पष्ट किया कि सभापीठ द्वारा नियम 259 के अधीन इस शक्ति का प्रयोग किया जा रहा है और यदि सदस्यों की यह इच्छा है तो इस विषय के संबंध में एक विशिष्ट नियम को नियमों में अन्तर्विष्ट किया जा सकता है।[269]

कार्यवाही में से निकाले गए शब्दों का संकेत

सदन की कार्यवाही में से इस तरह निकाले गये अंश को तारांक द्वारा दर्शाया जाता है और कार्यवाही में निम्नलिखित व्याख्यात्मक पाद-टिप्पण समाविष्ट की जाती है: ''सभापीठ के आदेशानुसार निकाला गया।''[270] यदि शब्दों को उत्तरवर्ती दिन निकाला जाता है, तो निकाले गए अंश का संकेत केवल मुद्रित वाद-विवाद में तारांक द्वारा दर्शाया जाता है। यदि सभापीठ ने निदेश दिया है कि किसी सदस्य के भाषण के किसी भी अंश को अभिलिखित नहीं किया जाएगा तो कार्यवाही के अन्त में यह पाद-टिप्पणी दी जाती है ''अभिलिखित नहीं किया गया।''

> शब्दों और टिप्पणों को न केवल सदस्यों के भाषणों से बल्कि मंत्रियों के भाषणों से भी निकाले जाने का आदेश दिया जाता है।
>
> 16 जुलाई, 1996 को जम्मू और कश्मीर में राष्ट्रपति शासन की अवधि बढ़ाए जाने संबंधी संकल्प पर चर्चा में गृह मंत्री श्री इन्द्रजीत गुप्त ने जम्मू और कश्मीर में हुए लोक सभा चुनावों में मतदान अधिकारियों के आचरण के संबंध में टिप्पणी की थी। गृह मंत्री की टिप्पणी पर कई सदस्यों ने कड़ी आपत्ति की थी जिस पर उपसभाध्यक्ष (सुश्री सरोज खापर्डे) ने गृह मंत्री की टिप्पणी और उस टिप्पणी के सुस्पष्ट उल्लेखों को कार्यवाही से निकाले जाने का आदेश दिया।
>
> 29 जुलाई, 1998 को तत्कालीन गृह मंत्री श्री एल॰ के॰ आडवाणी ने एक निर्णयाधीन मामले के संबंध में महाराष्ट्र सरकार के कतिपय कार्यों के संबंध में टिप्पणी की थी। सभा में बोलते समय सदस्यों को जिन मार्गदर्शी सिद्धांतों का पालन करना होता है उनके अनुसार संसद् में वाक्-स्वातंत्र्य संबंधी एक स्वारोपित प्रतिबंध यह है कि न्यायालयों के समक्ष न्यायनिर्णय के लिए लंबित पड़े मामलों पर सभा में चर्चा करने से बचना चाहिए ताकि न्यायालय ऐसे मामलों पर कार्रवाई करते समय मुकदमे के कार्यक्षेत्र से बाहर कही गई किसी भी बात से प्रभावित हुए बिना कार्य कर सकें। जब कुछ सदस्यों ने पीठासीन उपसभापति महोदय का ध्यान एक न्याय-निर्णयाधीन मामले पर गृह मंत्री की टिप्पणी की ओर खींचा तो उपसभापति ने गृह मंत्री की आपत्तिजनक टिप्पणियों को हटा दिया।

कार्यवाही से निकाला जाना तथा बाद में पुनः शामिल किया जाना

5 अगस्त, 1993 को प्रश्नकाल के तुरंत बाद श्री यशवंत सिन्हा ने सभापति की पूर्वानुमति से इंडो-रशियन क्रॉयोजेनिक राकेट इंजन सौदे के संबंध में रूस द्वारा इनकी आपूर्ति रोकने के प्रश्न पर शून्य-काल के दौरान एक वक्तव्य दिया और उसमें तत्कालीन वित्त मंत्री डा॰ मनमोहन सिंह के संबंध में कुछ टिप्पणियां कीं जो पीठासीन उपसभापति डा॰ (श्रीमती) नजमा ए॰ हेपतुल्ला द्वारा कार्यवाही से निकाल दी गई थीं। उस समय उपसभापति ने यह टिप्पणी की थी कि श्री सिन्हा की टिप्पणियां अप्रासंगिक हैं। अगले दिन 6 अगस्त, 1993 को जब श्री यशवंत सिन्हा ने यह पाया कि वित्त मंत्री के बारे में उनकी टिप्पणियां

5 अगस्त 1993 की ''असंशोधित/प्रकाशन के लिए नहीं'' वाद-विवाद में से निकाल दी गई हैं तो उन्होंने सभापति को एक पत्र लिखकर अपनी टिप्पणियों को पुन: वाद-विवाद में शामिल करने का अनुरोध किया क्योंकि उनकी टिप्पणियों को असंसदीय नहीं माना जा सकता था। जब श्री यशवंत सिन्हा का सभापति को किया गया अनुरोध उपसभापति के पास भेजा गया तो उपसभापति ने पुनर्विचार करने के उपरांत श्री सिन्हा की कार्यवाही से निकाली गई टिप्पणियों को पुन: वाद-विवाद में शामिल कर लिया।

समिति की कार्यवाही में से शब्दों का निकाला जाना

यदि समिति के अध्यक्ष की राय में किसी विसम्मति-टिप्पण में ऐसे शब्द, वाक्यांश या पद हों जो असंसदीय अथवा अन्यथा अनुपयुक्त हों तो वह ऐसे शब्दों, वाक्यांशों अथवा पदों को विसम्मति-टिप्पण से निकाल दिए जाने का आदेश दे सकेगा।[271] अध्यक्ष को इसी प्रकार की परिस्थितियों में शब्दों को निकाले जाने या विसम्मति-टिप्पण में से निकाले गए शब्दों के बारे में लिए गए सभी निर्णयों की पुनरीक्षा करने की भी शक्ति प्राप्त है और उसका निर्णय अंतिम होता है।[272]

राज्य सभा और उसकी दीर्घाओं आदि में अनजान व्यक्तियों का प्रवेश

राज्य सभा की बैठकों के दौरान सभा के उन भागों में, जो केवल सदस्यों के उपयोग के लिए ही रक्षित न हों, अनजान व्यक्तियों का प्रवेश सभापति द्वारा दिए गए आदेशों के अनुसार विनियमित किया जाएगा।[273] जब सदन की बैठक चल रही हो तो सभा-कक्ष सदस्यों के अनन्य उपयोग के लिए ही आरक्षित होता है और इसमें किसी अनजान व्यक्ति को प्रवेश की अनुमति नहीं दी जाती है। यदि कोई अनजान व्यक्ति यह जानते हुए कि वह सभा की सदस्यता के लिए अर्हित नहीं है। सदन में प्रवेश करता है और बैठता है, तो वह पांच सौ रुपए के जुर्माने का भागी होगा जो संघ को देय ऋण के रूप में वसूल किया जाएगा।[274] सदन के अन्य भाग जहां विनिर्दिष्ट स्थितियों में अनजान व्यक्तियों को जाने की अनुमति दी जा सकती है, आंतरिक बाह्य लॉबी, दीर्घा और केन्द्रीय कक्ष हैं। चैम्बर लॉबी और दीर्घा सदन के आन्तरिक क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं।

सचिवालय के किसी अधिकारी अथवा अन्य सभा के किसी कर्मचारी को सदन की बैठक के दौरान सदन में प्रवेश करने का अधिकार होगा।[275] इसलिए संसदीय शब्दावलि में, उन सभी व्यक्तियों को अनजान व्यक्ति कहा जाता है जो सदन के सदस्य या अधिकारी नहीं हैं।[276] विभिन्न दीर्घाओं में अनजान व्यक्तियों का प्रवेश सभापति के निर्देशों के अनुसार विनियमित होता है।

सभापति जब भी उचित समझे, सभा के किसी भी भाग से बाहरी व्यक्तियों का बाहर जाने का आदेश दे सकता है।[277] आगन्तुक कार्ड में निम्नलिखित अनुदेशों का हिन्दी और अंग्रेजी में उल्लेख किया जाता है:

1. प्रवेश उपलब्ध स्थान के अध्यधीन होगा।
2. यह कार्ड बिना किसी सूचना दिए निरस्त किया जा सकता है और इसके लिए कोई कारण भी नहीं बताया जाएगा।
3. यह कार्ड उसी व्यक्ति के पास रहेगा जिसके लिये यह जारी किया गया है। किसी भी प्रकार के उल्लंघन से संबद्ध व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही की जाएगी।
4. दर्शकों को स्मरण कराया जाता है कि जब सभा की कार्यवाही चल रही हो, तब वे मौन धारण किये रहें। प्रशंसात्मक अभिव्यक्ति, अथवा जोर-जोर से चिल्लाना और पर्चे बांटना प्रतिषिद्ध है। जहां तक संभव हो किसी भी प्रकार की आवाजाही न की जाये।

5. कोई दर्शक, चाहे वह दर्शक विधिमान्य कार्डधारी क्यों न हो, उन्हें किसी भी समय बिना कोई कारण बताए दीर्घा से बाहर जाने को कहा जा सकता है।

6. दर्शकों को छड़ी, छाता, हैण्ड बैग, अटैची केस, आग्नेयास्त्र, पुस्तकें आदि ले जाने की अनुमति नहीं होगी। वे टोकन केबिन में ऐसी वस्तुओं की घोषणा कर दें और उन्हें जमा कर दें।

7. दीर्घा में बुनाई करने की अनुमति नहीं होगी।

8. 10 वर्ष से कम आयु के बच्चों को दीर्घा में प्रवेश की अनुमति नहीं होगी।

सदस्य दर्शक दीर्घाओं में जा सकते हैं किन्तु यह वांछनीय नहीं होगा कि वे दर्शक दीर्घा में अधिक देर तक रुकें।

एक बार किसी सदस्य ने एक व्यवस्था का प्रश्न उठाया कि क्या सभा का कोई सदस्य दर्शक दीर्घा में जा सकता है और वहां से सभा की कार्यवाही देख सकता है, उपसभापति ने टिप्पणी की कि यद्यपि सदस्यगण विभिन्न दीर्घाओं में जा सकते हैं किन्तु किसी सदस्य के लिये यह उपयुक्त नहीं होगा कि वह उस दीर्घा के लिये किसी कार्डधारक के स्थान पर स्वयं बैठे रहें जो दर्शकों के लिये है।[278]

राज्य सभा की दीर्घाएं

राज्य सभा कक्ष की दर्शक दीर्घाओं में सार्वजनिक दीर्घा, विशिष्ट दर्शकों, राजनयिक और सभापति की दीर्घा, प्रेस दीर्घा और लोक सभा के सदस्यों की दीर्घाएं होती है। एक सरकारी दीर्घा (सभापति के आसन के दायीं तरफ स्थित) और एक विशेष बॉक्स (सभापति के आसन के बांयीं तरफ स्थित) भी हैं।

सार्वजनिक दीर्घा सामान्यत: जनता के प्रयोग के लिए है । कोई सदस्य केवल उन व्यक्तियों के लिए दर्शक-कार्ड जारी करने के लिए आवेदन कर सकता है जिन्हें वह व्यक्तिगत रूप से जानता हो और वे उसके निजी मित्र अथवा संबंधी हों अथवा कुछ चुनिंदा मामलों में सदस्य उन व्यक्तियों के लिए दर्शक-कार्ड जारी कराने के लिए आवेदन कर सकते हैं जिनका परिचय उन व्यक्तियों ने कराया हो जिन्हें वे व्यक्तिगत रूप से जानते हों। इस दीर्घा में प्रवेश के लिए कार्ड आवेदन करने पर ही जारी किए जाते हैं। इस संबंध में संसदीय समाचार में निम्नलिखित पैराग्राफ जारी किया जाता है:

सदस्यों का ध्यान विशेष रूप से निम्नलिखित प्रमाण-पत्र की ओर दिलाया जाता है, जो उनके द्वारा सभा की दीर्घाओं के लिए दर्शक-कार्डों हेतु आवेदन करते समय दिया जाता है:

''उपरोक्त नाम का दर्शक मेरा रिश्तेदार/मित्र है जिसे मैं व्यक्तिगत रूप से जानता हूं और उसकी पूरी जिम्मेदारी लेता हूं''।

सदस्यों से अनुरोध है कि वे कृपया इस बात को सुनिश्चित कर लें कि जिन व्यक्तियों के लिए दर्शक-कार्ड बनवा रहे हैं उन्हें वे व्यक्तिगत रूप से जानते हैं।

सदस्यों से अनुरोध है कि वे यह सुनिश्चित कर लें कि आवेदन-पत्रों में आवश्यक विवरण विधिवत् रूप से भरा हो। यदि उसमें सभी आवश्यक विवरण नहीं दिए गए होंगे तो दर्शक-कार्ड जारी करना संभव नहीं होगा।

सदस्यों से यह भी अनुरोध है कि दर्शक-कार्ड सभा की जिस दिन की बैठक के लिए अभिप्रेत हो, तत्संबंधी आवेदन-पत्र उससे एक दिन पहले म.प. 3.00 बजे तक सूचना कार्यालय में दे दिया जाएं।

सदस्यों से यह अनुरोध भी किया जाता है कि देश में मौजूदा सुरक्षा वातावरण को देखते हुए उसी दिन के लिए दर्शक-कार्ड जारी किए जाने के लिए अनुरोध न करें।[279]

विशिष्ट दर्शक, राजनयिक और सभापति दीर्घा प्रख्यात व्यक्तियों, पूर्व संसद् सदस्यों, राज्यों के मंत्रियों इत्यादि, विदेशी राजनयिकों और सभापति के अतिथियों तथा संबंधियों के लिए है।

प्रेस दीर्घा प्रत्यायित संवाददाताओं के लिए है जिन्हें महासचिव द्वारा सभापति के सामान्य आदेशों के तद्नुसार पास जारी किए जाते हैं।

लोक सभा दीर्घा विशेष रूप से लोक सभा के सदस्यों के लिए है ताकि वे राज्य सभा की कार्यवाही देख सकें।

अधिकारी दीर्घा भारत सरकार के केवल उन अधिकारियों के लिए है जिनकी उपस्थिति सभा में होने वाले कार्य के संबंध में अपेक्षित होती है।

विशेष बॉक्स राष्ट्रपति के परिवार तथा अतिथियों, विदेशी राष्ट्राध्यक्षों और विदेशी संसदीय शिष्टमंडलों इत्यादि के लिए आरक्षित है।

लॉबी

राज्य सभा लॉबी में आंतरिक लॉबी (इसे डिवीजन लॉबी भी कहा जाता है) तथा बाहरी लॉबी आती है। यह लॉबी वर्तमान तथा भूतपूर्व संसद् सदस्यों के बैठने आदि के लिए है।

केन्द्रीय कक्ष

केन्द्रीय कक्ष (सेन्ट्रल हॉल) मुख्यत: संसद् सदस्यों के प्रयोग के लिए है। भूतपूर्व सदस्यों को केन्द्रीय कक्ष में फोटो पहचान-पत्र के आधार पर प्रवेश की अनुमति है जोकि संबंधित सचिवालय द्वारा उन्हें जारी किया जाता है। कतिपय समाचार-पत्रों के संवाददाताओं को भी, जिनके पास प्रेस-पास होते हैं, अपना पास दिखाने पर केन्द्रीय कक्ष में प्रवेश की अनुमति है।

केन्द्रीय कक्ष के लिए प्रवेश-पत्र राज्य सभा के सूचना कार्यालय द्वारा उन व्यक्तियों को जारी किए जाते हैं जिनके लिए सदस्यों द्वारा विशेष रूप से लिखित में अनुरोध किया जाता है। केन्द्रीय कक्ष में प्रवेश की सुविधा के लिए केवल निम्नलिखित श्रेणी के व्यक्ति ही पात्र हैं:

1. विधान सभा / विधान परिषद् के वर्तमान सदस्य

2. मुख्य मंत्री / राज्यों के मंत्री

3. राज्यों के भूतपूर्व मंत्री

4. वर्तमान सदस्य के पति/पत्नी, पुत्र/पुत्री।[280]

इस प्रयोजन के लिए आवश्यक फार्म सूचना कार्यालय में उपलब्ध हैं।

केन्द्रीय कक्ष में राष्ट्रपति के अभिभाषण के दौरान केन्द्रीय कक्ष की दर्शक दीर्घा में प्रवेश के लिए निर्धारित फॉर्म में आवेदन देना आवश्यक है। केन्द्रीय कक्ष की दर्शक दीर्घाओं में राज्य सभा के सदस्यों तथा उनके अतिथियों के लिए बैठने के स्थान अत्यन्त सीमित हैं। इसके लिए प्रवेश-पत्र ''पहले आओ-पहले पाओ'' के आधार पर जारी किए जाते हैं।[281]

नियमों का निलम्बन

कोई सदस्य, सभापति की सहमति से, प्रस्ताव कर सकेगा कि राज्य सभा के समक्ष उपस्थित किसी विशेष प्रस्ताव पर किसी नियम का लागू किया जाना निलम्बित कर दिया जाए और यदि प्रस्ताव स्वीकृत

हो जाये तो संबंधित नियम उस समय के लिए निलम्बित कर दिया जाता है। यदि नियमों के विशेष अध्याय के अधीन किसी नियम के निलम्बन के लिए कोई उपबंध पहले से ही मौजूद हो तो नियमों के निलम्बन संबंधी सामान्य नियम लागू नहीं होता।[282] जैसाकि सभापति ने एक अवसर पर टिप्पणी की थी, ''मेरी स्वीकृति द्वारा ही प्रश्नकाल निलम्बित किया जा सकता है। मैं स्वीकृति नहीं दे रहा हूं।...मेरी स्वीकृति के बिना कोई भी नियम निलम्बित नहीं किया जा सकता।[283]

यद्यपि, यह सभापति के विवेकाधीन है कि वह नियम के निलम्बन के प्रस्ताव को उपस्थित करने के लिए अपनी स्वीकृति प्रदान करे। विवेक का प्रयोग अत्यन्त सावधानीपूर्वक तथा सतर्कता से और सभी पहलुओं पर विचार करने के पश्चात् ही किया जाता है। निलम्बन के प्रत्येक अनुरोध पर उसके गुण-दोष पर विचार करने के पश्चात् ही सभापति द्वारा स्वीकृति प्रदान की जाती है। अनेक अवसरों पर सभापति ने प्रस्ताव, विशेष रूप से प्रश्नकाल के संबंध में उपस्थित करने के लिए स्वीकृति देने से इनकार कर किया।[284] एक अवसर पर एक सामान्य प्रस्ताव उपस्थित किया गया कि सत्र के दौरान प्रश्नकाल, ध्यानाकर्षण प्रस्ताव और गैर-सरकारी सदस्यों के कार्य को पूर्णतया निलम्बित कर दिया जाए।[285]

सभापति की अवशिष्ट शक्तियां

सभापति को ऐसे सभी मामलों, जिनका नियमों में विशिष्ट और पर्याप्त रूप से उपबंध नहीं किया गया है, को निपटाने की शक्तियां प्राप्त हैं। ऐसे सभी मामले, जिनका नियमों में विशिष्ट रूप से उपबंध न किया गया हो, और नियमों के विस्तृत प्रवर्तन से संबंधित सब प्रश्न ऐसी नीति से विनियमित किए जाएंगे जिसका कि सभापति समय-समय पर निदेश दें।[286] इन शक्तियों का प्रयोग करते हुए सभापति ने प्रश्नों, समितियों, विशेष उल्लेख, रजिस्टर से विधेयकों को निकाले जाने आदि से संबंधित अनेक मामलों में समय-समय पर निदेश जारी किए हैं। अंतर्निहित शक्तियों के अधीन सभापति सभा की कार्यवाही के विवरण में से शब्दों को निकाले जाने का आदेश उन आधारों पर दे सकता है जिनका उपबंध शब्दों के निकाले जाने से संबंधित नियम में नहीं है।

टिप्पणियां और संदर्भ

1. संसदीय समाचार (1), 6.2.1996 (संख्या 35512)
2. नियम 223(1)
3. नियम 223(2)
4. नियम समिति का 7वां प्रतिवेदन (14.2.1995 को प्रस्तुत किया गया)
5. संसदीय समाचार (1), 30.5.1995
6. संसदीय समाचार (2), 23.2.1996 (संख्या 35563)
7. नियम 39
8. नियम 60(2)
9. नियम 154
10. नियम 160(2) और 232
11. नियम 62(3)

12. नियम 95(1)
13. संसदीय समाचार (2), 6.2.1996 (संख्या 35513), नियम 180 ग(1)
14. नियम 113 और 123
15. संसदीय समाचार (2), 19.2.1996 (संख्या 35527), नियम 180 (1)
16. नियम 180 क से 180 ङ
17. नियम 224(1)
18. नियम 3(1)
19. नियम 7(1)
20. नियम 29(1)
21. नियम 195(2), 160(3)
22. नियम 224(2)
23. नियम 227
24. नियम 225
25. याचिका समिति का चौथा प्रतिवेदन, पैरा 3
26. नियम 226
27. अनुच्छेद 3
28. अनुच्छेद 274(1)
29. अनुच्छेद 117(3)
30. नियम 234
31. राज्य सभा वाद-विवाद, 24.12.1980, कालम 256–66 और 18.3.1981, कालम 283–90
32. नियम 235–40
33. नियम 238(1)
34. अनुच्छेद 105(1)
35. नियम 47(2)(xix)
36. नियम 169(viii)
37. नियम 157(v)
38. राज्य सभा वाद-विवाद, 8.5.1986, कालम 281
39. पागे समिति का प्रतिवेदन, पैरा 26–28 और 30
40. राज्य सभा वाद-विवाद, 18.11.1964, कालम 330-31; और 15.3.1988 , कालम 218–22
41. -वही- 15.3.1988, कालम 221 और 226
42. अनुच्छेद 105(1) और (2)

43. नियम 238(v)
44. संसदीय समाचार (1) 4.12.1967
45. -वही- 22.11.1967
46. -वही- 30.3.1977
47. -वही- 13.3.1969; 5.3.1970 और 27.4.1981
48. -वही- 12.5.1986
49. -वही- 20.3.1967; 20.11.1967; 16.2.1968; 24.2.1970 और 24.11.1970
50. -वही- 11.5.1968
51. -वही- 30.3.1973
52. -वही- 21.12.1964
53. -वही- 8.6.1967
54. -वही- 22.7.1969
55. राज्य सभा वाद-विवाद, 7.12.1987, कालम 309
56. नियम 238क
57. -वही- परन्तुक
58. डाइजेस्ट, पृष्ठ 604-05
59. व्यक्तिगत स्पष्टीकरण संबंधी प्रक्रिया के लिए आगे **देखिए**
60. राज्य सभा वाद-विवाद, 8.3.1978, कालम 122
61. नियम 241 और राज्य सभा वाद-विवाद, 3.4.1989, कालम 127-28
62. राज्य सभा वाद विवाद, 22.11.1962, कालम 21, 61-62
63. -वही- 11.3.1969, कालम 3151
64. -वही- 30.3.1988, कालम 66-67
65. अब्राहम एण्ड हॉट्रे, ए पार्लियामेन्टरी डिक्शनरी, पृष्ठ 144
66. राज्य सभा वाद-विवाद, 31.8.1973, कालम 84
67. -वही- 31.7.1980, कालम 160
68. एन इनसाइक्लोपीडिया ऑफ पार्लियामेंट, पृष्ठ 560
69. राज्य सभा वाद-विवाद, 25.11.1955 कालम 569; राज्य सभा वाद-विवाद, 29.2.1956, कालम 1078 को भी **देखिए**
70. -वही- 1.8.1991, कालम 270-74
71. -वही- 3.12.1985, कालम 190-91
72. -वही- 8.8.1977, कालम 8-9
73. संसदीय समाचार (1), 4.12.1978

74. राज्य सभा वाद-विवाद, 23.5.1990, कालम 187–97

75. संसदीय समाचार(1), 21.2.1986

76. -वही- 16.12.1969

77. -वही- 4.8.1983

78. संसदीय समाचार(1), 15.12.1977; और 16.12.1977

79. राज्य सभा वाद-विवाद, 20.11.1980, कालम 223

80. -वही- 21.11.1962, कालम 1944

81. -वही- 19.8.1963, कालम 644-45

82. संसदीय समाचार (1) 29.8.1973 (श्री एल॰ एन॰ मिश्र के द्वारा); 18.2.1975 (श्री चन्द्रजीत यादव के द्वारा); 14.8.1978 (श्री बीजू पटनायक के द्वारा); 16.8.1978 (श्री जॉर्ज फर्नान्डीज के द्वारा); 27.3.1979 (श्री रवीन्द्र वर्मा के द्वारा); 13.12.1985 (श्री नटवर सिंह के द्वारा); 5.8.1980 (श्री सी॰ एम॰ स्टीफन के द्वारा); 17.11.1980 (श्री सी॰ पी॰ एन॰ सिंह के द्वारा); 30.8.1990 (श्रीमती मेनका गांधी के द्वारा); 28.8.1991 (श्री पवन कुमार घटोवर के द्वारा)

83. राज्य सभा वाद-विवाद, 30.8.1990, कालम 152—57

84. नियम 242(1)

85. नियम 242(2)

86. नियम 242(3)

87. -वही- परन्तुक

88. नियम 244(1)

89. नियम 244(2)

90. पार्लियामेन्टरी डिक्शनरी, **पूर्वोक्त** में भी, पृष्ठ 58

91. राज्य सभा वाद-विवाद, 24.7.1952, कालम 1948

92. -वही- 16.3.1954, कालम 2877-78

93. -वही- 31.8.1956, कालम 2969-70

94. -वही- 8.12.1967, कालम 3222

95. नियम 245(1)

96. नियम 245(2)

97. राज्य सभा वाद-विवाद, 4.5.1954, कालम 5068-70

98. नियम 246

99. नियम 247

100. राज्य सभा वाद-विवाद, 22.9.1954, कालम 2989–91

101. नियम 256(2)

102. नियम 248

103. नियम 249

104. -वही- पहला परन्तुक

105. राज्य सभा वाद-विवाद, 24.9.1954, कालम 3282–87

106. -वही- 14.3.1972, कालम 98–100 (कालम 100 पर पाद-टिप्पण) और 14.4.1972, कालम 84

107. -वही- 12.11.1986, कालम 163–65

108. -वही- 20.9.1963, कालम 4972–97

109. राज्य सभा वाद-विवाद , 21.3.1967, कालम 266–71

110. नियम 249, दूसरा परन्तुक

111. राज्य सभा वाद-विवाद 9.3.1984, कालम 239–41

112. -वही- 19.7.1978, कालम 239–302

113. संसदीय समाचार (1), 27.7.1978

114. राज्य सभा वाद-विवाद 31.7.1978, कालम 106–34; 1.8.1978, कालम 176–231; 2.8..1978, कालम 159–92

115. -वही- 3.8.1978, कालम 216

116. -वही- 3.4.1989, कालम 20, 53; 4.4.1989, कालम 38-39

117. -वही- 13.8.1974, कालम 5–8

118. -वही- 27.8.1974, कालम 21–34, 232–54

119. संसदीय समाचार(1), 11.9.1974

120. राज्य सभा वाद-विवाद, 4.12.1974, कालम 206–36

121. -वही- 5.12.1974, कालम 174-75; 6-12-1974, कालम 158-59

122. -वही- 9.12.1974, कालम 125-27

123. -वही- 10.12.1974, कालम 139, 143; 11.12.1974, कालम 122-23

124. -वही- 20.3.1987, कालम 259–66

125. -वही- 8.1.1976, कालम 6

126. -वही- 19.12.1953, कालम 2894

127. -वही- 4.4.1989, कालम 52-53

128. -वही- 8.3.1978, कालम 119-34

129. -वही- 21.4.1953, कालम 3460

130. राज्य सभा वाद-विवाद, 25.2.1966, कालम 1320—23
131. -वही- 18.12.1970, कालम 108—14
132. अध्याय-4 के अंतर्गत **देखिए**
133. राज्य सभा वाद-विवाद, 7.5.1959, कालम 2205-06
134. -वही- 23.1.1976, कालम 151, 152
135. -वही- 9.3.1984, कालम 289
136. -वही- 15.5.1956, कालम 2170–85
137. -वही- 11.9.1956, कालम 4078–82
138. -वही- 22.4.1974, कालम 92
139. नियम 250
140. राज्य सभा वाद-विवाद, 7.5.1959, कालम 2196—2201
141. संसदीय समाचार (2), 5.2.1996 (संख्या 35502)
142. कौल और शकधर, पृष्ठ 881
143. -वही- पृष्ठ 882
144. अनुपूरक कार्यावलि, 20.3.1995
145. संसदीय समाचार (2), 8.8.1960; 10.8.1960
146. राज्य सभा वाद-विवाद, 30.8.1960, कालम 2720
147. -वही- 24.7.1980, कालम 84; संसदीय समाचार (1) उसी तारीख का और फाइल संख्या 35/9/80-एल
148. -वही- 22.11.1962, कालम 2161-62
149. -वही- 21.3.1967, कालम 371–73, राज्य सभा वाद-विवाद, 26.7.1996 भी **देखिए**
150. -वही- 6.4.1967, कालम 2560–79
151. -वही- 31.3.1969, कालम 6388
152. -वही- 27.4.1953, कालम 4106
153. -वही- 25.11.1952, कालम 192-93
154. -वही- 19.9.1955, कालम 3499-3500
155. संसदीय समाचार (1), 26.2.1992
156. संसदीय समाचार (2), 9.4.1992 (संख्या 32975)
157. संसदीय समाचार (2), 30.7.1992
158. संसदीय समाचार (1), 26.8.1994
159. -वही- 8.3.1996
160. राज्य सभा वाद-विवाद, 31.3.1967, कालम 1663–79
161. -वही- 22.11.1962, कालम 2161-62 राज्य सभा वाद-विवाद, 22.2.1996, कालम 933-34 भी **देखिए**
162. -वही- 28.11.1958, कालम 600—02

163. राज्य सभा वाद-विवाद, 28.2.1963, कालम 1176, 1216—18

164. -वही- 22.2.1965, कालम 492–95, 604–09; 26.2.1965, कालम 1337-38; 2.3.1965, कालम 1496-97

165. -वही- 26.2.1991, कालम 182

166. नियम 251

167. राज्य सभा वाद-विवाद, 24.2.1987, कालम 228

168. -वही- 22.2.1966, कालम 846

169. -वही- 31.7.1991, कालम 370–73; 1.8.1991, कालम 356–96; 1.8.1991, कालम 344–51; 2.8.1991, कालम 290–318; 6.8.1991, कालम 173–84; 7.8.1991, कालम 274–84; 9.9.1991, कालम 353–55; 7.9.1991, कालम 252–84

170. -वही- 27.11.1991, कालम 339–48; 29.11.1991, कालम 153–71, 243–47

171. वही- 3.11.1988, कालम 328-40; 4.11.1988, कालम 289-378

172. -वही- 27.11.1991, कालम 339–48

173. -वही- 28.4.1987, कालम 184

174. संसदीय समाचार (1), 26.2.1992

175. -वही- 27.2.1992

176. राज्य सभा वाद-विवाद, 28.2.1992, कालम 247–71

177. -वही- 3.3.1992, कालम 259–64 और 6.9.1996

178. संसदीय समाचार (1), 27.8.1993

179. राज्य सभा वाद-विवाद, 4.8.1993, कालम 333-34 और 18.8.1993, कालम 417-23

180. -वही- 26.11.1985, कालम 240–41 और 10.12.1985, कालम 179–333

181. संसदीय समाचार (1), 28.4.1989

182. -वही- 24.7.1991, 25.7.1991 और 26.7.1991

183. राज्य सभा वाद-विवाद, 30.7.1985, कालम 249

184. संसदीय समाचार (2), 8.7.1991 (संख्या 32369)

185. कार्य मंत्रणा समिति का कार्यवृत्त, 1.8.1991; संसदीय समाचार (2), 2.8.1991

186. राज्य सभा वाद-विवाद, 1.8.1991, कालम 357

187. -वही- 4.12.1967, कालम 2347 और 13.12.1967, कालम 3909

188. संसदीय समाचार (1), 21.1.1985

189. -वही- 9.7.1992

190. -वही- 13.8.1985 और 14.8.1985

191. संसदीय समाचार (1), 20.8.1995

192. -वही- 18.12.1992 और 21.12.1992

193. राज्य सभा वाद-विवाद, 18.3.1980, कालम 150—60

194. **देखिए** अनुच्छेद 61(4), 67(ख), 90(ग), 94(ग), 124(4) 148(1), 217(1)(ख), 249(1) , 312(1), 352(6) तथा 368 जिनके अंतर्गत उल्लिखित मामलों के निर्णय हेतु विशिष्ट बहुमत अपेक्षित हैं

195. अनुच्छेद 100(1)

196. एन इनसाइक्लोपीडिया ऑफ पार्लियामेंट, पृष्ठ 212

197. नियम 252(1)

198. नियम 252(2)

199. नियम 252(3)

200. राज्य सभा वाद-विवाद, 28.7.1988, कालम 299-300

201. नियम 252(4)(क)

202. नियम 252(4)(ख)

203. नियम 252(4)(ग)

204. ए पार्लियामेन्टरी डिक्शनरी, पूर्वोक्त में भी, पृष्ठ 166

205. संसदीय समाचार (1), 24.3.1995

206. राज्य सभा वाद-विवाद, 30.1.1980, कालम 347-48

207. -वही- 13.10.1989, कालम 290–94

208. संसदीय समाचार (2), 22.5.1996, संख्या 35674

209. राज्य सभा वाद-विवाद, 7.10.1982, कालम 220—22

210. इस पद्धति के विस्तृत कार्यकरण के संबंध में **देखिए**, राज्य सभा सचिवालय द्वारा 2 दिसम्बर, 1994 को इस विषय पर निकाली गयी पुस्तिका

211. नियम 253(3)

212. नियम 253(4)

213. नियम 253(5)

214. राज्य सभा वाद-विवाद, 15.12.1961, कालम 2501–27

215. -वही- 13.10.1989, कालम 301

216. नियम 254(1)

217. नियम 254(2)

218. नियम 254(3)

219. नियम 254(4)

220. नियम 254(5)

221. नियम 254(6)

222. राज्य सभा वाद-विवाद, 17.9.1981, कालम 612

223. अनुच्छेद 100(1)

224. राज्य सभा वाद-विवाद, 5.8.1991, कालम 180-82

225. नियम 77

226. नियम 207(2), 212घ(2), 212(ट)(2), 212ध (2)

227. एन इनसाइक्लोपीडिया ऑफ पार्लियामेंट, पृष्ठ 565

228. राज्य सभा वाद-विवाद, 27.2.1982, कालम 3–11; 22.8.1990, कालम 228

229. तुलना कीजिए नियम 236 और 243

230. हैंडबुक फॉर मैम्बर्स, पृष्ठ 54

231. राज्य सभा वाद-विवाद, 1.3.1979, कालम 259–61 और 30.5.1990, कालम 268

232. -वही- 2.5.1963, कालम 1828

233. -वही- 25.1.1980, कालम 52-56; **साथ ही देखिए,** राज्य सभा वाद-विवाद, 15.12.1980, कालम 207–15

234. -वही- 23.12.1980, कालम 49-78

235. -वही- 8.9.1961, कालम 3911-16

236. -वही- 14.3.1985, कालम 265-69

237. -वही- 21.8.1984, कालम 196, इसे भी **देखिए,** 1.3.1979, कालम 259—61

238. -वही- 15.11.1971, कालम 223-241

239. -वही- 21.3.1985, कालम 154

240. -वही- 5.12.1967, कालम 214-59; 13.2.1968, कालम 61; 19.1.1976, कालम 21; 1.3.1978, कालम 17; 4.5.1984, कालम 16-17, 193-94; और 5.9.1990, कालम 11

241. -वही- 9.3.1979, कालम 226-27

242. हैनसॉर्ड, 23.3.1964, कालम 172

243. लोक सभा नियम 376(5)

244. -वही- 376(6)

245. कौल और शकधर, पृष्ठ 836-37

246. हैनसॉर्ड, 26.3.1952, कालम 786

247. नियम 260

248. हैंडबुक फॉर मैम्बर्स, पृष्ठ 71-72

249. राज्य सभा वाद-विवाद, 25.11.1996, कालम 2964

250. संसदीय समाचार (2), 22.5.1996 (संख्या 35680)

251. नियम 85(5)

252. नियम 89

253. नियम 261

254. राज्य सभा वाद-विवाद, 22.8.1961, कालम 1242-43

255. -वही- 21.11.1962, कालम 1944

256. -वही- 27.3.1985, कालम 364, 405

257. -वही- 11.6.1971, कालम 141-45

258. -वही- 8.12.1971, कालम 3; 15.4.1987, कालम 210-11

259. -वही- 13.11.1987, कालम 207-08

260. -वही- 14.5.1974, कालम 135-40

261. -वही- 23.7.1980, कालम 14-16

262. -वही- 25.7.1980, कालम 119-20

263. -वही- 11.6.1971, कालम 141-45

264. संसदीय समाचार (2), 18.8.1989

265. फाइल संख्या 41/1/92-एल

266. राज्य सभा वाद-विवाद, 1.7.1980, कालम 125-26

267. -वही- 6.8.1980, कालम 275-88

268. -वही- 27.4.1988, कालम 10-12

269. नियम समिति का पहला प्रतिवेदन, पृष्ठ 9

270. नियम 262

271. नियम 90(7) (i)

272. नियम 90(7) (ii)

273. नियम 264

274. अनुच्छेद 104

275. नियम 263

276. ए पार्लियामेन्टरी डिक्शनरी, **पूर्वोक्त** में भी, पृष्ठ 208

277. नियम 265

278. राज्य सभा वाद-विवाद, 27.4.1955, कालम 6279 और 6300

279. संसदीय समाचार (2), 9.2.1995

280. -वही- 9.2.1955

281. संसदीय समाचार (2), 7.2.1995 (संख्या 34929)

282. नियम 267

283. राज्य सभा वाद-विवाद, 22.5.1990, कालम 1-2

284. **देखिए,** अध्याय-17

285. -वही-

286. नियम 266